

असम की जनजातियाँ

लोकपक्ष एवं कहानियाँ

सम्पादन

रीतामणि वैश्य

सजिल्द प्रथम संस्करण : 2023

vaniprakashan.com

वाणी प्रकाशन

4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110 002

फ़ोन : +91 11 23273167, 23275710

शाखाएँ

अशोक राजपथ, पटना-800 004, बिहार

कॉफ़ी हाउस कैम्पस, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-211 001, उत्तर प्रदेश

महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा-442 001, महाराष्ट्र

36/ए, शेक्सपियर सरणी, रानी बिरला गर्ल्स कॉलेज के पास, कोलकाता-700 017, प. बंगाल

sales@vaniprakashan.in

vaniprakashan@gmail.com

Asam ki Janjatiyan : Lokpaksh evam Kahaniyan

Edited by Ritamani Vaishya

ISBN : 978-93-5775-389-0

Stories / Social Science

© सम्पादक एवं लेखकगण

मूल्य : ₹ 750

इस पुस्तक के किसी भी अंश को किसी भी माध्यम में उपयोग करने के लिए प्रकाशक से लिखित अनुमति लेना अनिवार्य है।

आर. टेक ऑफ़सेट प्रिंटर्स, दिल्ली-110 032 में मुद्रित

वाणी प्रकाशन का लोगो मक़बूल फ़िदा हुसेन की कूची से

राभा जनजाति : समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. मालविका शर्मा
डॉ. प्रीति वैश्य

असम प्रान्त भारतवर्ष के उत्तर–पूर्व में अवस्थित है। असम एक विचित्र प्रान्त है। इसमें विभिन्न जाति–जनजाति के लोग निवास करते हैं। इन विभिन्न जाति–जनजातियों में राभा भारतवर्ष के संविधान स्वीकृत अन्यतम जनजाति है।

इतिहास

राभा जनजाति का इतिहास प्राचीन है। यह राभा जनजाति कौन है? कहाँ से आयी है? असम के किन–किन जातियों के साथ इनका सम्बन्ध है आदि विषयों पर विद्वानों में मतभेद पायी जाती है। ले. कर्णेल वाडेल के अनुसार राभा कछारी जाति की ही एक शाखा है (भट्टाचार्य 1991:163)। डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार राभा, कछारी का हिन्दू नाम है (भट्टाचार्य 1991:163)। एलेन के अनुसार राभा बोडो जनजाति का अंश है (भट्टाचार्य 1991:164)। हडसन के अनुसार राभा बोडो परिवार का है (हराचन 1880:105)। मेजर प्लेफेयार ने अपने गारो शीर्षक ग्रन्थ में राभा और गारो के बीच भाषिक और सांस्कृतिक सादृश्य के बारे विस्तृत रूप से विचार किया है। उनके अनुसार रंदानी (=राभा का एक अंश) और आटङ (=गारो जनजाति का अंश) के बीच भाषिक सादृश्य है (भट्टाचार्य 1991:164)। किन्तु डॉ. भुवन मोहन दास ने अपने राभा शीर्षक निबन्ध में लिखा है कि राभा एक स्वतन्त्र जनजाति है, क्योंकि राभा, गारो, कछारी, बड़ो जनजाति के ही विभिन्न अंश हैं। उसी दृष्टि से उनमें पारस्परिक सम्बन्ध हो सकता है। पर अपना ऐतिह्य, संस्कृति, विशेषता, विश्वास, आख्यान–उपाख्यान से परिपुष्ट राभा

स्वतन्त्र जनजाति है (भट्टाचार्य 1991:165)। राभा जनजाति असम की कुल जनसंख्या 3,12,05,579 में अन्तर्भुक्त जनजाति है। यह मंगोलीयन समूह के अन्तर्गत आने वाली प्रत्येक जनजाति बड़ो, मिचिङ, कार्बि, तिवा, देउरी आदि जनजातियों के अन्तर्गत उल्लेखनीय जनजाति है। भाषा–उपभाषाओं की–दृष्टि से राभा जनजाति तिब्बत–बर्मी भाषा समूह की असम वार्मीज शाखा के अन्तर्गत आती है। अन्य जनजातियों की तरह राभा जनजाति का भी असमीया भाषा, साहित्य, संस्कृति तथा समाज के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

भौगोलिक अवस्थिति

असम, मेघालय, बंगाल, बांग्लादेश, त्रिपुरा, बिहार तथा नेपाल में राभा जनजाति के लोग निवास करते हैं। असम में विशेषतः कामरूप, गोवालपारा, दरङ जिले तथा गारो पाहाड़ में राभा जनजाति के लोग निवास करते हैं। पश्चिम बंगाल में राभा लोग प्रायः जलपाईगुड़ी तथा कोचबिहार में निवास करते हैं।

जनसंख्या

राभा जनजाति की जनसंख्या का सरकारी आँकड़ा अभी तक उपलब्ध नहीं है। जन गणना के प्रतिवेदन के अनुसार असम में निवास करने वाली राभा जनजाति की जनसंख्या क्रमशः (1981 से अब तक) इस प्रकार से है–

सन् 1881 – 1. ग्वालपारा–14,293
2. कामरूप–22,723
3. दरङ–15,090
4. गारो पहार–3,758
5. अन्य–608
कुल–56,899।

सन् 1891 – 1. ग्वालपारा–29,269
2. कामरूप–17,526
3. दरंङ–16,594
4. गारो पहार–5,381
5. अन्य–1,004
कुल–69,774।

सन् 1911 – 1. गोवालपारा–32,415
2. कामरूप–25,025
3. दरङ–13,072
4. गारो पहार–8,075
5. अन्य–485
कुल–79,072।

सन् 1961 – 1. गोवालपारा–49,217
2. कामरूप–43,758
3. दरङ–10,673
4. लक्षीमपुर–2,686
5. नगाँव–885
6. काछार–612
7. शिवसागर–198
कुल–1,08,029।

सन् 1961 के प्रतिवेदन में वर्तमान मेघालय में निवास करने वाली राभा जनजाति को समाविष्ट नहीं किया गया है। इसीलिए राभा जनजाति के लोगों ने उक्त जनगणना पर सन्देह व्यक्त किया है। उन लोगों के अनुसार राभा जनजाति की जनसंख्या दो लाख से ज़्यादा है (राभा 2008:28)

आजीविका

असम एक कृषिप्रधान राज्य है। असम में रहने वाले राभा लोगों की आजीविका कृषि है। वे लोग आहु, शालि, उरद, सरसों आदि की खेती करते हैं। साथ ही राभा महिलाएँ वृक्ष की जड़, जामुन वृक्ष की चमड़ी, पत्ते आदि से रंग प्रस्तुत करती हैं और एरी, कपास, सूत आदि से निर्मित रंग–बिरंगें कपड़े बाजार में बेचती हैं। वे धान, विविध फल, साग–सब्जी आदि बाजार में बेचकर रुपये–पैसे कमाते हैं। वे खेत के सामान, मछ्ली पकड़ने के सामान, घरेलू कामों में व्यवहृत टोकड़ी, छलनी, डाला, सन्दूक, मेज–कुर्सी आदि बाँस, बेंत और काठ से बनाकर इस्तेमाल करते हैं।

भाषा एवं लिपि

राभा एक स्वतन्त्र भाषा है। यह किसी भाषा की उपभाषा नहीं है। यह राभा भाषा राभा नाम से भारतीय संविधान के षष्ठ अनुसूची के अन्तर्गत स्वीकृत है। वर्तमान यह भाषा सिर्फ राभा जनजाति के प्रमुख भेद रङदानिक और मायतरि में संरक्षित है (हाकाचाम 2011:23)।

राभा भाषा का प्राचीन निदर्शन सन् 1900 में Rev-AF-Stephen द्वारा अनूदित **The Prodigal Son** शीर्षक नीति कथा है, जिसे परवर्ती काल में ग्रियर्सन ने सन् 1903 में उनकी कृति **Linguistic Survey of India** में अन्तर्भुक्त करके दूसरी समगोष्ठीय भाषा के साथ राभा–भाषा का तुलनात्मक विश्लेषण करके राभा भाषा को स्वीकृति प्रदान किया (हाकाचाम 1991:47)।

तिब्बत–बर्मीय भाषाओं की तरह राभा भाषा की अपनी लिपि नहीं है। इसीलिए कोई शिलालिपि अथवा ताम्रलिपि में राभा का निदर्शन परिलक्षित नहीं होता है। राभा भाषा में पूर्ण ग्रन्थ सन् 1909 में प्रकाशित हुआ। ब्रिटिश एंड फरेन बाइविल सोसाइटी द्वारा प्रकाशित *मार्कनि निमा साइकाइ* नामक बाइविल का अनुवाद ही राभा भाषा का प्रथम ग्रन्थ है।

उप–विभाजन

वैदिक परम्परा की तरह कर्म के अनुसार राभा जनजाति के भी दल अथवा खेल (वर्ण) हैं। प्रारम्भ में राभा लोग दल के अन्तर्भुक्त नहीं थे। इन लोगों के इष्टदेवता *खोकचि* अथवा *वायखो* पूजा से राभा जनजाति का दल अथवा खेल बना। यह एक सामूहिक पूजा है। प्रारम्भ में आवियाबारी नामक जगह में *खोकचि* पूजा का थान (=वेदी) की स्थापना की जाती है। इस पूजा का पालन करने के लिए कर्म के आधार पर विभिन्न डाक अथवा खेल की सृष्टि हुई। ये हैं–

- रङदानिया (रङदानि)
- मायतरीया (मायतारि)
- दाहरी / दाहरि
- चुंगा (छंगा)
- पाति
- बिटलिया
- कोच

रङदानिया (रङदानि)

खोकचि पूजा में देवताओं का स्थापन करने के लिए लोगों के बैठने के लिए पत्थरों की आवश्यकता हुई। *रङ* का अर्थ पत्थर और *दान* का अर्थ है लेके आना। ये पत्थर दूर पहाड़ से लाने के किये लोगों का एक वर्ग बनाया गया था। उन लोगों को *रङदानिया* कहा गया।

मायतरीया (मायतारि)

जिन लोगों को पाक शालाओं का दायित्व दिया गया था, उन लोगों को मायतरीया कहा गया था। माय का अर्थ भात और तारि का अर्थ सभी को बाँटने वाले।

दाहरी / दाहरि

गाँव की कुछ दूरी पर स्थित सुनसान जगह पर खोकचि पूजा की गयी थी। वहाँ खान–पान की भी व्यवस्था की गयी थी। भोजन–गृह के आस–पास चिड़िया आये थे। उन चिड़ियों को भगाने के लिए व्यक्तियों को तैनात किया जाता था। ये लोग दाहारी (बांस की लम्बी लकड़ी से) से चिड़ियाँ भगाते थे। यह दाहारी शब्द बाद में अपभ्रंश होकर दाहरी अथवा दाहरि बना।

चुङा (छङा)

शराब और पानी पीने के लिए चुङा (=बांस का बना पानी पीने का पात्र विशेष) आवश्यक होता है। इसीलिए पहाड़ से बांस काटने के लिए जिनको नियोजित किया गया उन्हें चुङा कहा गया।

पाति

विभिन्न पूजायें, भोजन आदि में आवश्यक केले की पत्तियाँ संग्रह करनें के लिए जिन लोगों को नियोजित किया गया, उन्हें *पाति* वर्ग कहा गया।

बिटलिया

विभिन्न सामाजिक उत्सव, पर्व, त्योहार, शादी–ब्याह आदि में जो लोग मनोरंजन करके हँसाने का काम करते हैं, उन्हें *बिटलिया* कहा गया।

कोच

एक ही भाषिक परिवार अथवा एक ही मातृ–तांत्रिक होते हुए भी *कोच* जाति के लोग *खोकचि* पूजा नहीं करते, बल्कि *रोंताक* पूजा करते हैं।

वेशभूषा

रचनात्मकता मनुष्य का स्वाभाविक गुण है। इसी रचनात्मक प्रवृत्ति के बल पर मनुष्य आज तक अनेक कलाओं को जन्म देने में समर्थ रहा। प्रत्येक कला की अपनी मौलिक विशेषताएँ होती हैं, जिससे वह दूसरी कला से पृथक है। असम वयन शिल्प में अत्यन्त धनी है। 'छाँते शुकुवा मुठिते लुकुवा' (छाया में ही सूख जाता है, हाथ में ही छुप जाता है) जैसी बात असमीया नारी वयन–शिल्प में कितनी निपुण हैं, उसी को दर्शाता है।

असम की विविध जाति–जनजातियों का वयन–शिल्प असमीया संस्कृति का वाहक है। राभा, बड़ो, मिचिंग, कार्बि, देउरी, कछारी आदि जनजातीय लोगों के करघे से बुने जाने वाले सुन्दर कपड़े विश्व–दरबार में अपना अलग ही महत्त्व रखता है। *रिफान* या *पातानी* नामक मेखला राभाओं का मुख्य वस्त्र है। कढ़ाई–बुनाई की कला में राभा स्त्रियाँ अत्यन्त निपुण हैं। राभा समाज में घरेलु वेशभूषा अपने हाथों से बुनाई–कटाई करके पहनना स्त्रियाँ अपने जन्मगत और जातिगत कर्त्तव्य समझती हैं। राभा युवतियाँ, नवविवाहित स्त्रियाँ आदि तीन तरफा वेशभूषा से अपने आप को सजाती है। यद्यपि *रंदानि, मायतारि, कोंच, पाति, दाहुरि, टोटला* और *बिटलिया* अलग–अलग फैद के राभा लोग अलग–अलग वेशभूषा पहनते हैं, फिर भी रंग और फूलों के निदर्शन में एक जैसा ही रंगबिरंगीपन देखा जाता है। ये वस्त्र राभा–स्त्रियाँ तरह–तरह के फूल, वृक्ष, लता, विविध प्रकार के फल, जीव–जानवर, मछ्ली आदि के विविध निदर्शन प्रस्तुत करते हुए कपासी, एरी आदि सूत से निर्मित करती हैं। राभा स्त्रियाँ द्वारा निर्मित वेशभूषाओं में प्रमुख रूप से उल्लेखनीय वस्त्र हैं–

रिफान या पातानी

यह एक मेखला जैसा वस्त्र है। यह लाल, हरा, बैंगनी आदि विविध रंगों में बुनी जाती है। बनावट और व्यवहार की–दृष्टि से *रिफान छक्काय* या *छकवा, राभा रिफान, रिफान छाब्रा, लेमफटा* आदि विविध प्रकार के होते हैं। *छकवा रिफान* और राभा *रिफान* तीन–चार हाथ का होता है, जबकि *लेमफटा*

रिफान लम्बाई में चार से साढ़े चार और चौड़ाई में ढाई से तीन हाथ तक हो सकता है। *लेमफटा रिफानों में जोरपारु, घाटपारु, गाछि पारु, मजा पारु* आदि का प्रचलन महिलाओं में विशेष रूप से देखा जाता है। राभा लोग विवाह में दुल्हनों को लाल रंग का *रिफान* देते हैं। यह वस्त्र दो तरीके से पहना जाता है। छाती से घुटनों तक पहने जाने वाले वस्त्र को *लेमा रिफान* कहा जाता है, जबकि कमर से पैर तक पहनने वाले वस्त्र को *रिफान दुखुरि* या *धुतरी* कहा जाता है। विविध उत्सवों में बुजुर्ग स्त्रियाँ छाती से लेकर पैर तक *रिफान* या *पातानी* पहनती हैं। युवतियाँ, नव विवाहित स्त्रियाँ आदि कमर से लेकर घुटनों के नीचे तक चार हाथ लम्बा और तीन हाथ *चौड़ारिफान* बुनकर पहनती है।

काम्बुङ

राभा स्त्रियाँ और युवतियाँ छाती में लपेटकर पहनती हैं, जो लम्बाई में दो तीन हाथ का और चौड़ाई में डेढ़ हाथ का होता है। ये लोग प्रायः ढाई हाथ लम्बे और एक हाथ चौड़ा *काम्बुङ* पहनते हैं। *काम्बुङ* विविध प्रकार के होते हैं। जैसे *काम्बुङ मिछि* या *काम्बुङ मुछुक*। पांकाय काम्बुङ खास रूप से सफ़ेद और काला–सफ़ेद रंगों के सूत से बुना जाता है, लेकिन महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस आकार के दूसरे रंग से बुने वस्त्र को काम्बुङ नहीं कहा जाता।

खचने या खंदबा या खप्रङ

सर में जूड़ा ढकने के लिए इस वस्त्र का प्रयोग होता है, जो तीन हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा होता है। यह दिखने में *जारा बाफक* के जैसा है। विवाह, *बायखो* पूजा, मृतक कर्म *फ़ारकांति* और हांछाङ पूजा में औरतें इस वस्त्र को पहनती हैं।

बुकबिल

यह बिना बाहों वाले क़मीज़ के जैसा है, जिसे विवाहित राभा औरतें पहनती हैं। युवतियाँ लाल, नीले, हरे, काले आदि गाढ़े रंगों के *बुकबिल* पहनती हैं, जबकि बुजुर्ग महिलाएँ सफ़ेद या कम रंग के *बुकबिल* पहनती हैं।

आंचा

यह राभा महिलाओं द्वारा पहनी जाने वाली चादर के जैसा वस्त्र है,

लेकिन बुजुर्ग स्त्रियाँ इसे प्रायः नहीं पहनती। *आंचा* प्रायः लम्बाई में ढाई हाथ से तीन हाथ तक और चौड़ाई में एक हाथ का होता है।

खछने या खोपङ

इसे कहीं–कहीं *फाक–चेक* नाम से भी जाना जाता है। यह तीन–चार हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा फूल–अंकित वस्त्र है, जिसे राभा पुरुष मस्तक पर लपेटकर पहनते हैं।

पाछरा

राभा पुरुष द्वारा व्यवहृत इस वस्त्र की लम्बाई पाँच हाथ और चौड़ाई तीन हाथ है। जाड़े के दिनों में ठण्ड से बचने के लिए इसे ओढ़ा जाता है। एरी सूत से इसे बनाया जाता है।

पाजाल

चाहे लड़के हो या बुजुर्ग हो, सभी राभा पुरुष इस वस्त्र का प्रयोग अपने गले को लपेटने के लिए करते हैं। इसकी लम्बाई साढ़े चार या पाँच हाथ की और चौड़ाई एक या दो हाथ की होती है। यह वस्त्र सामाजिक उत्सव, सामूहिक सभा आदि में नहीं पहना जाता, लेकिन *लाहा* (=रंगविशेष) रंग से बुने *पाजाल* का विशेष महत्त्व होता है, क्योंकि विवाह, धार्मिक उत्सव आदि में इस रंग से बुने *पाजाल* का ही प्रयोग होता है। रांदानी राभा पुरुष गाढ़े लाल या काला रंग का *पाजाल* पहनना पसन्द करते हैं।

दतारि

राभा स्त्री और पुरुष दोनों ही *दतारि* पहनते हैं। कमर में पहनने वाला यह वस्त्र तीन या चार हाथ लम्बे और दो हाथ चौड़े होते हैं। पुरुष जो *दतारि* कमर में पहनता है, वह प्रायः सफ़ेद रंग के धागे से बुना जाता है।

छेंकामेन

राभा पुरुष इसे कमर में पहनते हैं। बुजुर्ग औरतें भी इसका प्रयोग करती हैं। रंग–बिरंगा सूत से बुने इस वस्त्र को कहीं–कहीं *फालि* भी कहा जाता है।

जलङा

यह हाथ से बनाये जाने वाले कपास का झोला है। राभा लोगों में इसका प्रयोग विशेष रूप से देखा जाता है।

सुन्दर वेशभूषा के साथ ही सुन्दर अलंकार नारी की सुन्दरता में चार चाँद लगा देता है। राभा औरतें विविध प्रकार के अलंकार पहनते हैं। कान में पहनने वाले अलंकारों में *नामब्रि, बोला नामब्रि, बालि* आदि प्रमुख हैं। वे गले में चन्द्रहार, *जिंजिरी, सिकि* या *छुकिया, हांचा* आदि पहनते हैं। *सिकि* अलंकार को चाँदी के सिक्कों से माला जैसा गूंठा जाता है। राभा औरतें हाथों में *मल कंगन* नामक कंगन पहनती हैं और इसके साथ हाथ बाजु पहनती हैं। इसके अलावा वे *छान, बाउति, मायार चिंग* जैसे कंगन और *काटा बाजु* नामक बाहुबन्ध पहनती हैं। *रुबुक* हाथी के दाँत या प्लास्टिक से बनी माला है, जिसे औरतें कमरबन्ध के रूप में पहनती हैं। राभा औरतें पैरों में पैर कंगन पहनती हैं। वे जुड़े में खुछ माक्रंग नामक अलंकार पहनती हैं। यह लोहे की सलाई है, जो लम्बाई में लगभग नौ–दस इंच की होती है। वे अपनी उँगलियों में *चाछितान* नाम की अंगूठी पहनती हैं।



त्योहार

लोक–संस्कृति के साथ लोक–उत्सव का घनिष्ठ सम्बन्ध है। किसी एक जाति की लोक–उत्सव से उस जाति विशेष की लोक–संस्कृति की झलक मिलती है। राभा समाज में विविध प्रकार के त्योहार मनाये जाते हैं, जो इस प्रकार के हैं–

खोकचि या बायखो

खोकचि या *बायखो कृषि* की अधिष्ठात्री देवी मानी जाति हैं। इस उत्सव *को हुइमारु, मूलपूजा, किल्लादिबिकाय, लेओवाबुकाय* और *छाथार* नामक पाँच प्रमुख कृषिजीवी राभा लोग नृत्य गीत के माध्यम से बड़े ही उत्साह

से मनाते हैं। इसे साल में एक बार आयोजित किया जाता है। सात दिन सात रात तक यह पूजा पहले वैशाख और जेठ महीने में आयोजित की जाती थी। आज–कल यह पूजा श्रावण और भादौ महीने में आयोजित की जाता है।

हाछि (माराङ)

पाप या अधर्म के देवता हैं। जब गाँव में कोई बीमारी, मार–काट, अकाल मृत्यु आदि होते हैं तो उससे बचने के लिए *हाछि* देवता की पूजा की जाती है। यह उत्सव हर साल चैत्र महीने के किसी एक शनिवार या मंगलवार को शाम के समय गाँव वाले मिलकर मनाते हैं। यह उत्सव मनाने का उद्देश्य होता है कि पिछले वर्षों के सभी बुरे कर्म, अपवाद आदि खत्म हो जाये और आने वाले दिनों में नियमित रूप से बरसात और अनुकूल मौसम के अनुसार गाँव वालों की उन्नति हो। इसके लिए लोग *देउरी* और *पालि* का निर्वाचन करते हैं। वे लोग इस पूजा में बलि देते हैं। इस पूजा में औरतें और नाबालिक लड़के–लड़कियाँ भाग नहीं ले सकते तथा घर का मुखिया इस पूजा में हिस्सा लेता हैं।

छोङबाइ

तांगी या हाचाङ या लाङामारा यह एक समूहिक पूजा है, जिसे सभी राभा लोग मनाते हैं। इस पूजा में *मामा छिबु दारामाँग* यानी महादेव और *काचाइखाती* यानी भगवती की पूजा की जाती है। यह पूजा वैशाख या जेठ महीने में की जाती है। कई लोग *लांगा* पूजा के दिन ही यह पूजा आयोजित करते हैं। नदी के किनारे यह पूजा की जाती है। पूजा के अन्त में गाँववासी एक स्थायी थान में एक स्थायी आसन में बैठकर दूसरे स्थानीय देव–देवियों को विविध बलि से प्रसन्न किया जाता है और शराब भात आदि खाकर बड़े उत्साह से इसे मनाया जाता है।

ग्रीमबुदा

यह एक कृषि से सम्बन्धित शरदकालीन उत्सव है, जिसे *मायातरी* राभा लोग पूस के संक्रांति के दिन मनाते हैं। *रंगदानी* और *पाति* राभा इसे *दामाँग* या *हाचुबुदा* कहते हैं। *ग्रीमबुदा* में लक्ष्मी की पूजा के साथ साथ दूसरे देव–देवियों की भी पूजा की जाती हैं।

फाराकांति

यह *माइतेरीय रंगदानी* का एक मृतक उत्सव है। वे लोग तीन प्रकार से श्राद्ध का आयोजन करते हैं। इसमें जो सूत्रधार बनता है, वह रो रोकर मृतक की आत्मा की सदगति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है। इस उत्सव में युवक–युवतियाँ विविध भंगिमा में नृत्य भी करते हैं।

इनके अलावा भी राभा समाज में विविध लोक–उत्सवों का प्रचलन हैं, जिनमें से *टुतुरीया* पूजा (शिव–शक्ति की पूजा), *उम्रा* पूजा (दुख बीमारी आदि से बचने के लिए की गयी पूजा), *गिर्कय* उत्सव (वैशाख महीने में मनाया जाने वाला उत्सव), *जागार* (काली या होली), *हानाघोड़ा* (वैशाख महीने व में मनाया जाने वाला उत्सव), *बिछुवा* (वैशाख बिहु), *रौंताक* (लक्ष्मी पूजा) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। गाँव वाले विविध बीमारी, अमंगल, भूत–प्रेत जानवरों से बचने के लिए, खेत की रखवाली करने के लिए विविध देव–देवियों की पूजा अर्चना करते हैं।

लोक–नृत्य

लोक–नृत्य लोक–संस्कृति का वाहक है। राभाओं की लोक–संस्कृति अत्यन्त समृद्ध है। उनकी संस्कृति में अनेक लोक–नृत्य हैं। ये लोक–नृत्य विविध पूजा, उत्सव, विवाह आदि में किये जाते हैं। राभा लोग हिंदुओं के विविध देव–देवियों की पूजा करते हैं। इनके अलावा उन लोगों के कुछ अपने देव–देवियाँ हैं, जिनकी वे लोग पूजा करते हैं। कृषि से सम्बन्धित उत्सव *खकचि* या *खोकची* पूजा में खेतों की अधिष्ठात्री देवी *खकचि* को सन्तुष्ट करने के लिए देवी के सामने बड़े सूअर की बलि चढ़ायी जाती है। यह पूजा कई दिनों तक चलती हैं। पूजा में लोग शराब पीकर आनन्द में मस्त होते हैं। रात के समय बिना सोये नाच–गाना करते रहते हैं। दाहरि राभाओं में यह पूजा बहुल रूप में समादृत है जहाँ पूजा का प्रतिनिधित्व करने वाले देउरी को आग के ऊपर पैदल चलकर अपने शुद्धिकरण (शुचिता) का प्रमाण देना पड़ता है। इस पूजा में *कारा, ब्रांछि, खाम, तततेंग* वाद्य–यन्त्र के ताल पर *गांराजा* (जो मोर पंख के गुच्छे लेकर नाचते हुए सबके आगे चलता है) हाथ में *गांरा, माक्ते* (बलि देने वाले व्यक्ति) हाथ में खड़ग और बेंत की लाठी तथा पूजा में भाग लेने वाले बाकी पालि देउरी दोनों हाथों में दो बाण लेकर नाचते हैं। नाच के ताल पर देउरी ग्रामीण

देव–देवियों के नाम पर बेदी में उबाले हुए चुड़ा पीठा और शराब अर्पण करते हैं और मन्त्र उच्चरित करते हुए पूजा करते हैं। यह नाच अत्यन्त ही लचीली है जो आगे–पीछे करके मोर–मोरनी के नाच के अनुकरण पर नाचा जाता है। पूजा के अगले दिन देउरी के घर में ही नाच–गाना होता है। इनके अलावा राभा जनजातिओं में बायखो पूजा से सम्बन्धित *किल्ला दिबिकाय* (कृतिम किले तोड़ने का प्रतीकी नृत्य), *लेओवा विकाय* (लता खींच कर किया जाने वाला नृत्य) आदि नृत्य विशेष महत्त्व रखते हैं। सात दिन सात रातों तक चलनेवाले इस अनुष्ठान की आखरी रात देउरी के घर में सूत्रधार हँसी–मजाकपूर्ण (कौतुक धर्मी) नाच नाचते हैं। इसमें *देओधनी* भी अहम भूमिका निभाती है। वह मूकाभिनय के द्वारा लोकवाद्य के ताल पर नाचता है। राभा लोग मृतक कर्म *तरांकाजिया फारकांति* में नाच–गाना करते हैं। मृत–कर्म के दिन आँगन के बीच कृत्रिम रूप से एक शमशान बनाया जाता है। बाजा बजाने वाले के साथ रखवाली करने वाले और पुरुष काठ के विविध औज़ार लेते हुए तथा औरतें ढाल–तलवार लेकर नृत्य–गीत करते हैं। सात दिन सात रातों तक मनाए जाने वाले मृतक कर्म में अलग–अलग प्रकार के प्रतीकधर्मी नाच नाचा जाता है।

राभाओं का सबसे प्रमुख लोक नृत्य है–*देओधनी*। इस नृत्य को *जागार* पूजा में प्रस्तुत किया जाता है। *जागारा* पूजा सम्पन्न करने के लिए एक *देओधनी* की आवश्यकता होती है। *देओधनी* प्रायः गोवालपारा अंचल के लोकप्रिय धुलिया दल के *चानाई–ढ़ोल–तारचा–कासार* विविध बोलों के ताल पर अलग–अलग मुद्रा से नृत्य करते हैं। कभी–कभी वे देवी–देवताओं को प्रसन्न करने के लिए *नागारा* नाम, पद्मपुराण के *ओजापालि* के साथ भी ताल मिलकर नृत्य करते हैं और कभी–कभी राभा लोक–नृत्य दल के नचनियों के साथ भी ताल में नाचते हैं। *जागारा* पूजा में पूरा दिन विविध नृत्य करके बलि का रक्तपान कर शाम से पहले वे देओधनी नृत्य समाप्त करते हैं। नृत्य के अन्त में वे नाच घर के पूर्वी दिशा में गड़े हुए बाँस को जोड़ से पकड़कर सर को घूमाते रहते हैं और झट से हाथ छोड़ देते हैं। ऐसा करने से बेहोस होकर ज़मीन पर गिर जाते हैं और तब उनके पीछे खड़े रहने वाले देउरी *देओधा* या *देओधनी* को तब तक पकड़कर रखते हैं, जब तक उन्हें होश नहीं आ जाता। होश आने के बाद *देओधा* या *देओधनी* सबको प्रणाम कर घर लौटते हैं। उल्लेखनीय है कि सभी थानों में सभी *देओधा* या *देओधनी* नहीं नाच सकते, उनके लिए

निश्चित होते हैं। जैसे– *जागारा* पूजा में नियोजित *देओधा* या *देओधनी* सिर्फ विशेष थान में ही नाच सकते हैं। उसी प्रकार श्मशान काली पूजा के देओधा या देओधनी मुँह में जलता हुआ दिया लेकर नाचते हैं।

देओधनी नृत्य के अलग अलग प्रकार होते हैं। जैसे *नागारा* नाम के दल के साथ आरती करते समय किया गया नृत्य, राभा लोकनृत्य दल के साथ *खोकछि* नृत्य, *हाचङ* पूजा में किया गया नृत्य आदि।

राभाओं में एक और प्रतीकी नृत्य का प्रचलन है, जिसे *हानाघोड़ा* अनुष्ठान में प्रस्तुत किया जाता है।

देंङ चंङ चंङ या भालू नचाने वाले गीत प्रस्तुत करते समय भी राभा लोग नृत्य करते हैं। इस नृत्य में एक व्यक्ति भालू का नकाब और केले के पत्ते से बनी एक ढीली क़मीज़ पहनकर कुछ साथियों के साथ रात को दूसरों के घर–घर जाकर लोगों की मंगल कामना करते हुए नाचता फिरता है।

मारे पूजा में भी देओधनी विविध नाच दिखाते हैं।



लोक–वाद्य

लोक–संस्कृति में लोक–वाद्य एक महत्त्वपूर्ण उपादान है। वाद्य के बिना नृत्य–गीत करना असम्भव है। राभा लोग वाद्य–यन्त्र के मामले में काफी समृद्ध है। विविध उत्सवों, विवाहों, पूजाओं में एवं शिकार तथा युद्ध जाने से पहले राभा लोग विविध वाद्य बजाते हैं। उनके वाद्य–यन्त्रों में बाँस से बने *काढ़ानल, झपकारा* या *छिंगा, बादुङदुप्पा* या *बादुङदुंगा, ब्राङछि*

नामक बाँसुरी, *बुबुरेङा, काण टुकुरी* नामक छोटे आकार के ताल आदि शामिल हैं।

धर्म और लोक–विश्वास

सृष्टि सम्बन्धी विचार

राभा जनजाति के विश्वास के अनुसार सृष्टि के प्रारम्भ में पृथ्वी में सिर्फ पानी था। सृष्टि से पहले 18 ऋषि या देवता थे। इन देवताओं में *क्रिमिचुङ* सबसे ज्येष्ठ और *नमल* सबसे कनिष्ठ देवता थे। सृष्टिकर्ता के इच्छानुसार कनिष्ठ देवता *नुमिल* ने पहले *केकेरा* (=केकड़ा) की सृष्टि की। *केकड़ा* ने नीचे कीचड़ लाकर एक सुन्दर सी पृथ्वी की सृष्टि की। उसके बाद कछुए की सृष्टि हुई। और कछुए की पीठ पर पृथ्वी की स्थापना हुई।

जन्मान्तरवाद

राभा जनजाति के लोग जन्मांतरवाद, कर्मफल तथा जीवात्मा–परमात्मा के अस्तित्व पर भी विश्वास करते हैं। उन लोगों के अनुसार यम देवता मानव–जीवन के पाप–पूण्य का विचार करते हैं। उनके अनुसार मृत्यु का अधिकारी *यामगदा* (=यम) हैं और *यमराजा* मनुष्य शरीर से प्राण (=जीव) निकाल कर ले जाता है। इसे मृत्यु कहा जाता है।

आध्यात्मवाद

राभा जनजाति के लोग आध्यात्मवाद पर विश्वास करते हैं। उनके अनुसार मानव शरीर पंचभूत अर्थात् क्षिति, अप, अग्नि, मरूत और व्योम से गठित है। इसीलिए हिंसा, घृणा आदि से दूर रहना चाहिए। उनके अनुसार मृत्यु का अर्थ मायामय संसार के तिक्त विषय वासना से मुक्ति प्राप्त करना है।

आशावाद

राभा जनजाति के लोग आशावादी हैं। मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेने की आशा में वे जीवित अवस्था में सतमर्म पर बल देते हैं। इसीलिए मृत व्यक्ति के श्राद्ध के समय मृत–आत्मा की सदगति के लिए परिवार तथा समाज के सभी वर्ग के लोग रो–रो कर नृत्य–गीत करते हैं। इस नृत्य–गीत के जरिये कीट–पतंग तथा अन्य प्राणी को राभा जाति के उच्च वर्ण में जन्म लेने के लिए प्रेरित करते हैं।

सर्वप्राणवाद

राभा जनजाति के लोग सर्वप्राणवाद को स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार संसार के सभी प्राकृतिक पदार्थों में प्राण हैं। वे साकारवादी हैं। वे बलि–विधान और पूजा–अर्चना में विश्वास करते हैं।

देव–देवी और पूजा–पाठ

देव–देवियों के प्रति उनलोगों का अपार विश्वास हैं। राभा जनजाति के कतिपय देव–देवियों पर विश्वास रखते हैं और वे श्रद्धार्पक उनकी पूजा करते हैं।

खोकचि और बायखो

खोकची अथवा बायखो राभा जनजाति की प्रमुख अधिष्ठात्री देवी हैं। खोकची और बायखो को कृषि–कार्य की अधिष्ठात्री देवी मानते हुए बलि देकर पूजा–अर्चना की जाती है।

हाछङ

हाछङ देवता *मायतारि* राभाओं के *खोकचि* अथवा *बायखो* देवी का नवीन संस्करण माना जाता है। विभिन्न देवताओं की समष्टि को *हाछङ* देवता कहा जाता है। इन देवताओं की स्थापना करने के नियम हैं। *दारमाङ* देवता को बीच में स्थापन किया जाता है। दाई ओर *कनचो, फेदर, लाङाचारा, लांगाचा* और *बुढ़ावादि* तथा बाई ओर *चारि, कायनाङ, त्रयनाङ, तुरा पाजाम्बा* और *खुछरिक* को स्थापित किया जाता है (राभा 2008:102)। इस पूजा में नृत्य–गीत के साथ–साथ शराब का प्रचलन भी होता है।

रोंताक या रून्तुक

रोंताक पूजा का अर्थ है घर की देवी की आराधना करना। हर घर में यह पूजा की जाती है। इस पूजा को ही राभा जाति की आदिम पूजा माना जाता है।

छोङवाय ताङगंडि

छोङवाय ताङगडि पूजा सामूहिक पूजा है। यह पूजा साल में एक बार की जाती है। राभा जनजाति में विश्वास है कि इस पूजा से पहले गृह–दोष

नाश किया जाता है। गृह–पूजा के बाद यह पूजा आयोजित की जाती है। गृह–पूजा के प्रथम दिन से इस पूजा तक गाँव में नृत्य–गीत आदि सभी मनोरंजनपूर्ण कार्यक्रम बन्द कर दिए जाते हैं। इस पूजा में महिलाओं का योगदान नहीं होता।

लाङा पूजा

पाति राभा और *रङदानि राभा* के बीच *लाङा* देवता की पूजा की जाती है। *लाङा* देवता की महादेव के रूप में पूजा की जाती है। यह पूजा गाँव के बाहर जंगल अथवा नदी के किनारे की जाती है। हर देव–देवी के प्रतीक के रूप में एक शिलाखण्ड का प्रयोग किया जाता है। यह पूजा वैशाख अथवा जेठ के महीने में होती है।

काँचा खाइति पूजा

राभा जनजाति के लोग देवी माँ को *काँचा खाइति* के रूप में पूजा करते हैं। यह पूजा भी वैशाख या जेठ महीने में की जाती है। कई लोग लाङा पूजा के दिन ही यह पूजा आयोजित करते हैं। नदी के किनारे यह पूजा की जाती है। यह सामूहिक पूजा है।

माराइ पूजा (मनसा पूजा)

गोवालपारा और कामरूप जिले के ब्रह्मपुत्र के दक्षिण दिशा में निवास करने वाली राभा जनजाति ने सबसे पहले इस पूजा का प्रचलन किया था। देउधनी का प्रचलन भी सबसे प्रथम राभा जनजाति में ही था।

दारमाङ बाय

दारमाङ बाय को स्वास्थ्य और धन सम्पत्ति का देवता माना जाता है। हर घर में बीमारियों को दूर करने के लिए यह पूजा की जाती है। राभा लोगों का विश्वास है कि यह देवता *दारमाङ* पहाड़ में रहता है।

बेरा–हाचुबाय

इसे गाय, भैंस आदि जानवरों की रक्षा करने वाले देवता के रूप में माना जाता है। इस देवता की पूजा में एक बकरी और एक लाल रंग के मुर्गे की बलि चढ़ायी जाती है।

लाङाचारा बाय

यह पूजा *हाछङ* पूजा के साथ–साथ की जाती है। गाँव के बाहर यह पूजा की जाती है।

हाय मायरङ बाय

राभा जनजाति में यह विश्वास है कि यह पूजा करने से घर की विपत्तियों का नाश हो जाता है।

खेलाराम बाय

यह हिन्दू देवता है। घर, पेड़–पौधे, फल–फूल नष्ट न होने के लिए यह पूजा की जाती है।

माराङ बाय

इसका अर्थ बड़ा व्यापक है। गाँव के अमंगल का विनाश करने के लिए यह पूजा की जाती है।

नबान्तर देवताएँ

साधारणतः *पाति* राभा नबान्तर के समय इन देवताओं की पूजा करते हैं– *सुवचनी, धर्म, लाङा, बुढ़ादेउ, पीरवासू।*

यह पूजा घर के आँगन में आयोजित की जाती है।

खान–पान

राभा लोगों का खान–पान अनेक विविधताओं से भरा है। वे घर की खेती में उत्पन्न विविध प्रकार के फल जैसे केला, कठहल, आम, साग–सब्जी जैसे कद्दू, मेजेंगा, बेटगाज, शेफालि के फूल, *तितभेकुरी*, केले का फूल, बांस गाज, करेला, लौकी, बैंगन आदि घर में ही उगाकर खाते हैं। वे लोग खाने में क्षार का विशेष रूप से प्रयोग करते हैं। खट्टे व्यंजनों को वे प्रायः चावल के चूरन से पानी में उबालकर खाते हैं। इसे *मि खिछारकाय* कहा जाता है। कभी–कभी चावल के चूरन से बनाये गये व्यंजनों में तेल में तला हुआ मांस दिया जाता है, जिसे *बायदामि मि* कहा जाता है और इसका प्रयोग पूजा विशेष में नैवद्य के रूप में किया जाता है।

मांस राभाओं के पसन्दीदा खानों में से है। वे सूअर, बकरी, मुर्गी, बत्तख आदि का मांस खाते हैं। इनके अलावा वे विविध प्रकार के कीड़े–मकोड़े जैसे– *एरी पलु, गुइ साँप, आमरली* चींटी, घोंघा आदि खाते हैं। वे व्यंजनों को *मि रुमकाय, माय रूमकाय, रोकाय, पंगना रोकाय, ज्याओकाय, खंदाति ज्याओकाय, रायछकि बिकाय, बाककि फाकाय, बारचेकेनि छोकाय, फुंगजि गिदापे तुमुनकाय, रायछकि छोदागिपकाय, छ्रांगान छोकाय* आदि विविध प्रकरणों से प्रस्तुत करते हैं। *माय रुमकाय* का अर्थ है भात पकाने की विधि। इसके अन्तर्गत *माय माचि या माय खुका* यानी माड़ भात, *माय पेल पेल* यानी कोमल भात, *माखाम रुमकाय* यानी पकाया हुआ बड़ा भात आदि आते है।

रोकाय का अर्थ है उबालना। इस विधि में विविध प्रकार के आलू, कहल की गुटली आदि को पकाकर खाया जाता है। *जाओकाय* विधि में व्यंजन को तलकर प्रस्तुत किया जाता है। तिल, मकै, उरद आदि को इस विधि से पकाया जाता है। *बिकाय* विधि में विविध प्रकार के छोटी मछलियों को केले के पत्ते या पारिजात फूल के पत्तों में लपेटकर नमक आदि छिड़ककर पकाया जाता है। इस विधि से पीठा भी प्रस्तुत किया जाता है। *फाकाय* विधि में बाँस की नाली में भात के अलावा बलि के लिए दिए जाने वाले नैवेद्य भी प्रस्तुत किये जाते हैं, लेकिन उल्लेखनीय बात यह है कि यह नैवेद्य *केयल* डेओशाल में ही प्रस्तुत किया जा सकता है। इसके अलावा पीठा, मछ्ली आदि भी इस विधि से पकाया जाता है। राभाओं में मांस, मछ्ली, साग–सब्जी आदि को सुखाकर व्यंजन पकाकर खाने की भी विधि है।

राभाओं के खान–पान में शराब का विशेष स्थान है। मेहमान की खातिरदारी वे शराब, तांबूल–पान आदि से करते हैं। वे लोग तेल मसलों का प्रयोग बहुत कम ही करते हैं। बड़ा चावल से बनाई गयी शराब देव–देवियों की पूजा में अत्यावश्यकीय माना जाता है। मरे हुए लोगों के लिए बड़ा चावल का भात, उबले हुए अण्डे आदि अर्पण किये जाते हैं, लेकिन दाल से बना व्यंजन तर्पण के रूप में नहीं दिया जाता।

छोकाय का अर्थ है सेंकना। इस विधि में मांस, मछली आदि को पहले उबाला जाता है और फिर उसे जलते हुए अंगारों में सेंककर नमक मिर्ची के साथ खाया जाता है।

साहित्य

मौखिक साहित्य

लोक संस्कृति के तत्वों में मौखिक साहित्य अन्यतम तत्व है। राभा जनजाति का मौखिक साहित्य अन्य साहित्य की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है। वस्तुतः ग्रामीण लोगों द्वारा मौखिक रूप से गाये जाने वाले गीत आदि ही राभा समाज की बुनियाद है। लोकगीत अथवा मौखिक साहित्य के माध्यम से राभा जनजाति का समाज–जीवन स्पष्ट रूप से प्रतिफलित होता है। अधिकांश विद्वानों ने मौखिक साहित्य को चार भागों में विभक्त किया है–

1. लोकगीत
2. कहावत
3. पहेलियाँ
4. लोक कहानी

लोकगीत

असम की विभिन्न जाति–जनजाति के लोकगीतों में राभा लोकगीतों का स्थान अन्यतम है। राभा लोकगीतों को विद्वानों ने तीन भागों में विभक्त किया है। जैसे :

1. अनुष्ठानमूलक गीत
2. आख्यानमूलक और
3. कर्मविषयक लोकगीत।

ये लोकगीत समूह प्राण–प्राचुर्य से भरपूर एक सांस्कृतिक धारा है, जिसकी परिवर्तित, परिशोधित और आधुनिक रूप आज भी अलिखित है। राभा समाज में प्रचलित इन गीतों के विषय कृषि–देवता, *हाछङ पूजा, बायखु पूजा, छाथार गीत, खुकचि पूजा, हुयमारू गीत, तुकुरीया देउ पूजा, मारै पूजा* आदि हैं। इन गीतों का प्रचलन राभा समाज में विशेषतः धार्मिक, सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवन के विभिन्न अनुष्ठानों में होता है। इन गीतों की विशेषता है कि अधिकांश गीत नृत्य के साथ–साथ गाये जाते है। इन गीतों में सहज–सरल ग्रामीण जीवन, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन का चित्रण देखा जाता है।

अनुष्ठानमूलक गीत

राभा जनजाति की *खोकचि पूजा* में आयतारि राभा जनजाति इस प्रकार के गीत गाते हैं। यथा--

'फइ फइ हाछि छानि कुरि छाउराताङउ
कुरि छानि चिङबा तोबालाति,
कुरि खेरे छाना लागिया
चिङबा तोखा गांदा--छे पुइ खेरेछे
छाइ रेङा लागिया।' (राभा 2008:140)

अर्थात् आओ आओ बच्चो। आओ हम भी चिड़िया की तरह हँसी--मजाक करके काम कराते जाएँ। कौवे की तरह खेल--कूदकर जीवन बिताएँ।

मृत व्यक्ति के श्राद्ध के समय राभा जनजाति में फारगष्ठि के गीत गाये जाते हैं--

'फेनछा नाङ नेमकाय राभानि नुकि जनम राखु।
पानमाङ--छान जनम तारिखु, फारि बार छप छानी।
तो हाङछिङ जनम ताराखु, कायताङ भतकाय छानो
माछु मिछि जनम ताराखु, कायताङ हाल बायनी।
चोङ काङकु जनम ताराखु, तो बिजान छानो।'

अर्थात् पुनः तुम धनी परिवार में जन्म लाभ करना। पेड़--पौधे, घास--फूस होकर जन्म मत लेना। जंगल के आग में विनाश हो जाओगे, मुर्गा भी नहीं बनना। आदमी मार देगा, गाय--भैंस होकर भी जनम मत लेना।

आख्यानमूलक गीत

राभा जनजाति के बीच विभिन्न आख्यानमूलक गीत हैं। इनमें से *बानराजा* और *ददान राजा* के गीत, *मारुक्षेत्री--गुरुक्षेत्री* के गीत, *बहुरङी खापोराङी गीत, तुकुरादेव पूजा* के गीत, *काढ़ाबांही* के गीत इत्यादि। उदाहरण के रूप में *दाहरि राभा के बन्दना--चंदना* के गीत उल्लेखनीय है--

'अ बन्दना उ--अ चंदना उ
अ नारङ कि जोरा बाये
बिछिना निलि निछमुलि उ
राखाते प्रोङे रेङ जो।' (राभा 2008:155)

अर्थात--हे वन्दना! हे चंदना! तुम लोग दोनों कुत्ते को साथ लेकर अपने--अपने पत्नीव्दय (निलि--निछमुनि) को आश्रय हीना करके कहाँ जा रहे हो?

विभिन्न कर्मविषयक गीत

जीवन के विभिन्न कर्मों के साथ सम्बन्धित गीतों में ना *बेकाय* (मछली पकड़ना), *माराङ–माठाङ* (शिकार करना), *बाङ, बाङ* तथा *लाखर गीत, नुखारेङकाय चाय, गछ कटा गीत* (=पेड़ काटना), नाव खेलर गीत (नाव–खेल का गीत) आदि उल्लेखनीय हैं। मछली पकड़ने के गीत की कुछ पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं–

रिबा रिबा अ रिबा ना बोना रिबा
ना बोना जपङ जुपुङग जुपुङग
मानदाय नेमेन चिथेवा।
नाचुङकाय रूमे राड़ों
अरङानछे छाना नेमो
न छाब्रा तारुम रे
अरङाबे छा सोछारे
सुकदुरङ फुड़ेना बनो रिबा।
रिबा रिबा अ रिबा ना बनो रिबा। (दास 2005:136)

अर्थात् सभी लोग आ जाओ, मछली पकड़ने के लिए आ जाओ। चारों तरफ मछलियाँ हैं। बड़ी–बड़ी मछलियाँ पकड़ना। क्योंकि बड़ी मछली में ही स्वाद होता है।

कहावत

कहावतें राभा लोकसाहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा है। विभिन्न समय रुचि–अभिरुचि तथा अनुभवों से पुष्ट इन कहावतों का असमीया लोक साहित्य में महत्त्वपूर्ण योगदान है। इन कहावतों के माध्यम से राभा जनजीवन की सामाजिक नीति, आर्थिक नीति, राजनीति, कृषि, शिल्प, वाणिज्यिक, पारिवारिक तथा सामाजिक आचार व्यवहार इत्यादि के प्रति मूल्यवान उपदेश अभिव्यक्त होते हैं। यथा–

1. *नेमे* या *नेमेछा* (अर्थात अच्छी तरह करना या अच्छी तरह खाना)
2. *काय छिया तेपे तो छिया पाणि पाके* (अर्थात आदमी कुछ बोलकर मरते है, चिड़िया पेड़ के डाली में बैठकर मरते है।)

पहेलियाँ

राभा समाज में पहेलियों का प्रचलन बहुत प्राचीन है। ये पहेलियाँ मित्राक्षरी छंद में रचित एक प्रकार का प्रश्न है। इन पहेलियों में छिपा हुआ अर्थयुक्त लोककथा बुद्धि दीप्तता का परिचय है। जैसे–

हाछ मुंदा मुंदा
चारि भाइ लेता पेता
भाइ आनिङ खारा।
उत्तर : माछु अर्थात गाय। (दास 2005:136)

कहानी

राभा लोक जीवन के सहज–सरल विश्वास तथा अनुभूति का प्रकाश राभा लोक कहानियों में देखा जाता है। राभा जनजातिं की लोक कहानियों में उनके समाज की संस्कृति, रीति–नीति, विधि–विधान इत्यादि की अभिव्यक्ति मिलती है। इन कहानियों की विशेषता यह है कि हर कहानी के पात्रों का एक नाम रहता है और कहानियों की विषय–वस्तु का आधार जातीय संस्कृति है। उदाहरण के रूप से सती *हयुमकचि* शीर्षक कहानी में राभा जाति का प्राचीन लौकिक इतिहास का चित्रण है।

साहित्य की–दृष्टि से राभा जनजाति काफी समृद्ध है। राभाओं में मौखिक और लिखित दोनों प्रकार के साहित्य पाये जाते हैं। उनका पहला लिखित साहित्य 1909 में प्रकाशित हुआ था। उनके साहित्य सभा को *बेबाक राभा रञ्चुम* कहा जाता है। इसने सन् 1973 में से राभा साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। राभा साहित्य में कविता, गीत, कहानी, नाटक आदि मिलते हैं। राभा भाषा के समकालीन लेखकों की संख्या अधिक नहीं है। राभा काव्य में रिणिकी चुरचुङ पाम *का मुकचरी* (2001), नितई राभा *का रोचोक पर* (2002), मणि राभा *का चरपकग्नि खुरङ* (1999) आदि के काव्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अर्जुन जुरो समकालीन प्रमुख राभा कवि हैं। उन्होंने चित्र के बीच में कविता लिखकर अपनी अलग पहचान बनायी है। उनकी *बुदा–मारि* (=पति–पत्नी) प्रेम सम्बन्धी कविता है। फुरपन राभा का *क्रिस्टी चिंगी* (1994), प्रवीण कुमार राभा का *चायनी थुपके* (1995) आदि गीति–साहित्य हैं। *रंगीर परसुराम* (1998) उपेन राभा हाकाचम का राभा नाटक है। झरना चिका चनी का *अंगीसे जोराय* (2000) मनोवैज्ञानिक रचना है। प्रमुख औपन्यासिक कृतियों में गंगाधर राभा हादू का *नङो चोकसा माना* (1998), लिस्ती राभा रङाख का *चरपकडी झोरछाप* (2005) प्रमुख हैं। राभा साहित्य में डॉ. उपेन राभा हकाचाम का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने राभा जनजाति पर कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं। निबन्धों में हकाचाम की *राभा*

CURRENT TRENDS IN MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

A Collaborative Analysis

Dr. Seema Roy Kurmi
Santana Saikia
Bijay Das
Milonjyoti Borgohain

Dr. Seema Roy Kurmi
Santana Saikia
Bijay Das
Milonjyoti Borgohain

© First Published: May 2023
Serials Publications (P) Ltd.

ISBN: 978-93-91844-56-1

All rights reserved. No part of this book may be reproduced, stored in a retrieval system, or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior written permission from the editors and publisher.

Printed in India
SERIALS PUBLICATIONS PVT. LTD.
4830/24, Prahlad Street, Ansari Road, Darya ganj,
New Delhi-110002 (India)
Phone : 23245225, 23259207, 23272135
E-mail: serials@mail.com

Chapter Nineteen

Gender Development in the Context of Modern Hindi Poetry

MALABIKA SARMA

The concept of gender development collectively applies to the human society. Usage ofthe phase in the context was popularized in the post-world war period in connection of describing the process through which countries and societies outside North America and Europe where to be transformed into modern developed nations from what their colonizers saw there as backward primitive and underdeveloped societies.In the context of gender development for feminist activities which have been centralized in the movement against environmental degradation and sustainability right from the inception of this movement. While identifying the sustainable development in 1993 Kamala Bhasin threw light on women, recognizing the responsibility which they have already assumed to cater the basic needs of a Society.

Though the Gender development was conceived after the event of the world war, the disinterestedness in women related matters were felt during the First World War. Accordingly the great poet Rabindra Nath Tagore conceptualized the condition of women in this fair verse with his statement "Kavyer Upekshita Nari".

The paper proposed to light on the Progressive development of women in the modern Hindi poetry. As we feel that the literature is a medium of expression of human feelings and sentiment, there women has been recognized as an original source of sensitivity.Though it has been treated as the co-ordination of nature in human for the original development of composition. Yet woman is treated as the governing power of the creation. Poets in Hindi literature have depicted women in different styles in different times.

From the early Vedic literature to the present, poet have depicted women according to their time and situation. The description of women in literature is it not only obligatory but extremely significant too .More specially, she has a specific importance in India (Bharat bhumi). In this land of Bharat it is said "Yatra naryasta pujyante ramante tatra Devata.

The contribution of accepting women in Vedic literature (as such invediccivilization) has been considered as extremely significant and a positive aspect of Indo literary stuff by many of our critics. Nirukta says that Manayantienah Purusha meaning women is the mostly related colleague of men.Therefore, she is called Yosha (Daga, Adhunik Hindi Muktak kavya me nari :40) now it has been cleared by this narration that women in India in the primitive time got themselves feel proud of beauty and a colleague in his different aspect.

The Apic 'Ramayana' distinguished Sita for her fidelity andmodesty, Likewise,The Mahabharata described mother's power of Kunti and Gandhari'sfidelity.

Poets of the contemporary time have been describing different aspects of women in different form and style in primitive Hindi literature too.

Though the primitive Hindi literature is imbued with full of sage of heroic deeds and religious guidelines even then we find two dimensioal depiction of women as heriocas well as a beautiful lady in Hindi literature Acaccordingly, in Siddha literature, women have been treated as a useful

or non-living entity only in the spiritual light, whereas in Nath literature women's beauty have been considered as an important one.

In Bhakti literature, women have two specific aspects-firsty, she is negligible and discarded in the society in the form of a general women. Secondly, she is honoureds feminine companion of adorable God (Goud 67: 1990). The great saint and the poet Kabir has condemned the women for her beauty, but again he praised the religious women. Poet Jaysee accepted women in the form of exceptional charming lady and also indicate her wickedness by saying Tum tiriya matihinTumhari (lady without intelligence) Lodha 45 :1988,whereas Tulsi Das treated Sita as an ideal woman in his Raamcharitmanasa, on the other hand he descarded other women like Radha as depicted by Surdasa as an ideal beloved of Krishna and in the same line, Meera worshiped Krishna with her melodious devotion, and with that way, she developed her emotions. The poets of the Ritikalin era considered woman in afeudalistic view in which a woman is only an equipment of life. She became a play tool of men during that particular period.

India was completely under control of the Britishers during Bhareyendu era of modern Hindi literature.As a result, gradual changes were noticed in politics, literature, socioeconomic sectors and especially in literature and education. It was for the first time that the reformer poet started to write in favour of discarded women of the society. In this situation Bhartendu narrated his lines as given below:

Vir prasaini budh vadhu his dinata khoy

Ńari ardhag ki sanchehi swamini hoy. Harioudh 46: 1988

The time of Mahavir Prasad Dwivedi is a vanity era for women folk. Poets were influenced by the renaissance movement in 20th century. There was a mass demand for complete freedom at that time. Accordingly women also took Partalong with men in the movement. People were inspired

by the Aryan Samaj, Brahma Samaj and Theosophical society. As a result man tried to fell the agony and pain of woman.For the first time poets depicted the loving aspect of women in the words, vz -

'Bas naam to abala inhe munion ne diya hai

Mahilaon ke saang bhari-sa annyay kiya hain 'Harioudh 1967: 268

With this impression of the era of the noble poet Ayodhya Singh Upadhya Harioudh has depicted Radha as an epitome of patriotism, patriotism and spirit for Social upliftment.

There after another important poet Maithili charan Gupta came forward during that time.He was followed up Mahatma Gandhi and therefore he became a supporter of redemption of deprived women and women- freedom .Owing to the Impression of essays that is' Kavyer upekshita nari 'of Rabindranath Tagore and ' Kavion ki Urmila bisyak udasinata' of Mahavir Prasad. Dwivedi Gupta has composed the' Saket 'Urmila is the central character of epic and represents modern Indian women embellished of patience ,responsible, duty bound. On the other hand, Yoshadhara is a neglected female character in Indian literature.Maithili Sharan Gupta has depicted Yashodhara as heroin with her devotion for duty of gratefulness in the composition. The poet also depicted confliction of Indian woman through Yohsodhara , as --

'Abala jiban hai,teriyahi kahani

Aanchal me dudh akhon me pani'Gupta 2020; 74

Although woman was given equal status to man in literature during Dwivedi era, still she was also considered with mercy. But in Post-romantic period of Hindi literature women have been given the position of beloved and accordingly a new trend of relationship of man -vs- woman.

Poet Jaishankar Prasad in his' Kamayani 'expressed women in the form of respectful Salutary and a mutually impressive entity as under:

Nari tum kewal shardha ho

Biswas rajat nag -pag-tal mein

Piyush shrut-si brahma koro

Jeevan ke sundar samatal me. Jai sankar Prasad 2016: 45

Thus, the poets of the post romatic era accepted women as a symbol of power and showed that she is not wholly dependable, superman, and rather she has a capability to go alone forward in the path of a struggle in any problematic and critical situation. Poets of that particular time, who were influenced by the situation, depicted women In their, compositions sometimes as mother sometimes as wife or sometimes inspiring forcemale.For the first time, Suryakant Tripathi 'Nirala' composed his long poem 'Saroj Smriti' where he memorized the painful death of his young daughter. However, the society treated with as often heart but yet she came out forward withman and take care of the family with here earnings. It is needless to recount here that here work is considered than that of its actual dignity below level. In this context we can see how a lady tried her life to break stones restlessly In the poem 'Todti patthar' composed by Nirala.

In the post-romantic period, women became equally educated to man.She acquired a good position in literature and got importance as a partner and inspiring source of men as well.

There was a great change in social life occurred after the Second World War resulting the changes distinctly noticeable in poetry and in literature .Therefore the poems written during the period, where is depicted reciprocal problems of women and men. Poets who were impressed by Froed ,Adler etc. started to write on the psychology of women in literature.Anjney, in the same time experimented the women in his poem as 'bichli ghass' and 'lah lahai hawa mei kalgi charhari bajre ki'.

The contemporary social impact in the poetry of Dharamvir Bharati in early 50s has also been considered in

his composition in' Kanupriya'. Radha, the central character is an unique beloved of Krishn but she is a complete modern woman. She is hopeful that Krishna will come back one day after his failure and once again he will be ready to create a new history in making Cooperation with her .As because, he knows that without the woman it is difficult to create a history for men.

Women's historical pride where came to an end after 6o's poetries.Poets who were very much impressed with realism started to create poems, desiringcopulation with women. The unlimited scientific power started creating. Hedonstick and its effects were also reflected in literature. The gradually broken human relationship also eeffected poetry. Dhumil, a cotemporary realistic poet has depicted women's different aspect like uncharted, pross etc. Present composition expressed clearly on what level today's society would forcibly life.

During 8th decade once again, Hindi poems gradually become drenched from human sensitivity. Different image of human sensitivities have gradually reflected in poetry. Agony of women in the Mahabharata and Ramayana accepted in poetry.

As an example, the poet in his composition Suryaputra has depicted maiden-mother Kunti whose pious virginity from matriachical to patriarchical and to give birth heroes. In the same time, different compositions where created for Droupadi, Mandakini, Panchali, Devaki, Maneka, etc.In which a modern opinoin hasbeen considered for women. Thus the poet in his compositions, has accepted women in the form of inseparable part of man and depicted her all acts as a partner's act in all the spheres of life. It may perhaps be cleared from the above discussion that women from the very beginning we reflected in different form as the time required ' . It may be the Vedic age or Modern age without women composition of any literature is impossible. May the position of women, is undergoing changes. It has temporary effect only in the wave of time but she has a great role to play in these heartfelt parts of literature that is

poetry in all era and ages to come.

References

1. Desai, J.M ----- Adhunik Hindi Kavya me Nari
Vidya Prakashan
Kanpur. 1st edition 1991

2. Goud, Reeta : Hindi Sahitya Me Radha ka charitrik vikas
Lok Bharati Praksan
1st edition 1990

3. Jai Sankar Prasad: Kamayani
New edition 1916

4. Lodha, Kalyan mal (ed) : Bharatiya Sahitya me Radha
National Publishing house
New Delhi, 1988

5. Rajpal, Hukum Chandra: Adhunik kavya me navin jivan mulya
Rachana prakasan. Allahabad 1975

INSIGHTS

EDITORS
DR. PRANJIT KUMAR NATH
DR. UTPAL KALITA

INSIGHTS
Collection of Research Articles

Edited by
Dr. Pranjit Kumar Nath and Dr. Utpal Kalita

Printed at
GPHI
Visakhapatnam

Editorial Board
Editors
Dr. Pranjit Kumar Nath
Dr. Utpal Kalita

Members
Mr. Ajit Talukdar
Mr. Mihir Mazumdar
Dr. Leela Kalita
Mr. Khanindra Das

Copyright © 2023, Editors

Offices
Bhubaneshwar, Guwahati, Hyderabad, New Delhi, Visakhapatnam

All rights reserved. No part of this book or parts thereof may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any language or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise without the prior written permission of the copyright owners and the publishers.

The view expressed in this book are those of the authors not necessarily that of the publisher. The publisher is not responsible for the views of the authors and the authenticity of the data, in any way whatsoever.

ISBN:- 978-93-95606-25-7

Published by Global Publishing House India
90, Saheed Nagar, Bhubaneswar-7, Odisha
H. No.4, Bye lane-7, New Sarania, Gandhi Basti, Guwahati-3, Assam
No.13-1-1,Vigneshwara Enclave, Anthony Nagar, Maharanipeta, Visakhapatnam-2, AP

Depiction of Shree Radha in Vedic and Puranik literature

Dr. Malabika Sarma

Abstract

Shree Radha is an eternal character in Indian literature. She is a celestial damsel of love and a complete image of womanhood. She has been studied by the research scholars and intellectuals for a long period of time. She is present in the minds of people and in all forms of literary works associated with Indian literature. In the Vedic literature, we find the word 'Radha' as just mentionable only, whereas the same 'Radha' in the 'BhagawataPurana' became the gopi of lord Krishna. Radha became the beloved and delightful power of Krishna in Hindi literature. In the research article, it covers the analytical study about Shree Radha in Vedic and Puranikliterature.

Keywords: Shree Radha, Vedic literature, Puranik literature

Shree Radha is an eternal character in Indian literature. She has been projected in various forms by the poets evermore, because

Radha is a celestial damsel of love and a complete image of womanhood. Therefore, her life personality and unswerving devotion and love is a source of inspiration of all the times for Indian poets. Out of numerous depictions of Shree Radha in different forms of Indian literature. We are going to evaluate the depiction of Shree Radha in the context of Vedic and Puranik Literature.

There is no unanimity scholar regarding the derivative of the word 'Ratha'. According to few scholars the word 'Radha' has been derived from the verbal root 'Radhh' meaning to be fulfilled properly. The BrihatSanskritabhidhanama' Vashaspatama' says that the word 'Radha' has been derived from the verbal root 'radh' by adding the suffix 'ach' to it. She has been regarded as 'VishakaNakshatrerirangsaysramanidehtianavivuyuyaltgolakathe parameshawardhangshwaroope'.(Lodha;1988:1)

The Sanskrit ShabdarthaKaustubha says 'radh ach radhnotisadhayatikarayani' (Lodha, 1988:1). It means that Radha is such a woman who can fulfil everything. The 'Amarkosha' interprets the word 'Radha' as a fullmoon of Vaishakh (the first months of the Hindu year). Passion, affection, love etc. Apart from these, she has been referred as the daughter of Vrishbhanugopa and the beloved of Shrikrishna.

Pandit Baldev Upadhyaya in his book 'Bharatiya Vangmaymein Shree Radha' has accepted that both the words 'Radhan' and 'Radha' have been derived from the root 'Radhvridhan'. When the prefix 'Aa' is added it becomes 'Aradhyati'. Both the words.carry the meaning of 'worship', adorations. (Upadhyaya, 1963, 32)

There are various opinions prevailing regarding the origin of 'Shree Radha', According to few scholars Radha was the Goddess of the Abir community and she was not the goddess of the Aryans. Renowned writer Pandit Balder Upadhyay has divided the process

of evolution of the Radha elements into three stages. The first stage does not acquaint us with the Radha name. It only informs us that there was a beautiful 'gopi' who was the beloved of Shree Krishna. Second stage is familiar with the name 'Radha'. Sanskrit literature does establish 'Radha' as the beloved of Krishna. The third stage is connected with the era of sixteen and seventeen centuries, where 'Radha' has been regarded as the delightful power of the supreme God.

In the Vedic literature 'Radha' word is not referred to as a proper noun. It has been used under the meaning of wealth, food, worship, a constellation etc., and not as a goddess of worship, Yaska, while explaining a hymn of the Rigveda indicates the meaning of the word 'Radha as wealth. In another of the 'Rigveda (1/30/5) the word 'Radha' has been mentioned as follows: "StrotramRadhanampategirbahoviryasyateVibhutirastusunrita" and "Idamhyanwojasasutamradhanampatepibatwasyagirvanaha." (Rigveda 3/51/10)

Here in the above two hymns 'Radhanem pate' is used as the objective of Lord Indra.

Shree Neelkantha, a commentator of the 'Mahabharata' made a research on the biographical features of the Lord Krishna in the Rigveda, where he mentioned "Radha" by way of a hymn as under-

"Atareshurbharatagavyavatasambhavataviprahasumatimn adinama. Prapinwadwaminhyantisuradha, awakshoraaha. Prinad hangyaatashiman.(Rigveda 3/33/12)

The word 'Radha' has been mentioned vividly in the 'Upanishadas'. There are mainly two Upanishadas connected with Radha- one is 'Radhopanishada' and the other is 'Radhikatapaniyouponishada'.

'Radhaponishada' is a prose form and it is an exponent of the dignity of Radha. Here Radha has been accepted as an extremely close and delightful power of Krishna.

On the other hand, Radha has been described as the permanent heroine of Krishna in the 'Radhikataponiyopanishadha', Here also invocation of Radhika is found and she has been established as the supreme one.

Apart from the Vedas and the Upanishadas, Shree Radha's perception may be acquired from Puranic literature also. Although, in different Puranas 'Radha has been mentioned with different perceptions, the authenticity and composition period of them are treated as of recent origin.

Shree Krishna's Brajalila has been broadly depicted in the BhagawataPurana among the various Puranas. The Vaishnava Goswamis have discovered the 'Radha- tatwa' on the basis of these descriptions. We may observe that Radha's name has not been clearly stated in the entire 'Bhagawatapurana'. In the tenth canto of the BhagawataPurana, wherein 'Raslila' activities have been narrated, we get the description that Krishna is busy in 'Raslila' with the gopies including a beloved one, but he gets vanished suddenly from the 'rasmandla' taking her with him. In such a situation, other gopies, becoming very impatient in love, do try to search out Krishna, During the searching they find few foot prints of a particular gopi with the Krishna's on the spotless & sands of the river of Yamuna. The gopies start praising the fortune of that particular gopi and the couplet goes like this:

Anayaradhitonunambhagawanaharirishwarahayannovihayago vindahpritoyamanyadrah.(Bhagawata: 10/30/24)

Sanatana Goswami, infact on the basis of this couplet has discovered "Radha". He has presented "Radha" on the basis of the phrase 'Anayaradhito' used in this particular couplet. He has

written in this commentary under the little 'Vaishnavatoshani' as the following:

'Anyaevaarodhitahaardhyavashikritahanatasmabhihradhayat iaradheyatitiradhetinaamakarahamchadarshitam. (Lodha, 1988,6)

On the basis of composition 'Vishnu Purana' among other Puranas is considered as the oldest one. We find a vivid picture of 'Rasalila' in its 13th chapter, wherein a "KritapuspaMadalasa' gopi has been mentioned. Here, in a 'Shloka' Bhagawata's word 'aradhitah' has been replaced with the word 'abhyarchitah".

In the Padmapurana the word 'Radha' is found several times. But there are some differences of opinion among scholars regarding its aniquity. Here in the 7th Chapter named 'Brahmakhanda' a religious activity called 'Radhashtami' has been recommended to be observed. Further in the 69th chapter and in many succeeding chapters, greatness of 'Vrindavana' has been described, wherein we may find the description of 'Radha' as the following:

Tatpriyaprakritistwavadyaradhikakrishnavallabhatatkalakotika tyangshadurgadhyatrigunatmidattasyaangidhrarjahsparhatkati vishnuhprajayate. (PatalKhand, PadmapuranConto 118, 69)

It means Radha is like the 'AdyaPrakriti' and the beloved Krishna. The goddess Durga and others with the three qualities are holding a fraction of a crore of Supernatural power of Radha. Further, just by the touching of her foot dust, crores of Vishnu are produced.

In the 'Devibhagawata' we do find a detailed description of worshiping of 'Radha' and the 'Radha mantra' as well as. In the 3rd chapter of the 9th Section of this scripture Radha has been described as the origin of the Great Vishnu. In the 50th chapter of this part the description of 'Radha mantra' and its 'jop-vidhi' and its effect have been specifically narrated. Here she has been regarded as the source of success of all desires. Further, it is said

that without worshiping 'Radha' nobody has the right to worship Krishna.

In the 'Brahmavaivartapurana' the most detailed description regarding Radha is available. We may find the origin and essence of Radha, in its 15th chapter. She has been described as the representative of an ideal woman. This chapter itself contains the description of the formal marriage between Radha and Krishna.

Apart from the description of Radha can be found in 'Matsyapurana' also. The GoudiyaVaishnavas have given importance to the 'Padmapurana' along with the Matsyapurana from among the famous Purana for comprehensive description of Radha.

Jiva Goswami has accepted the existence of Radha in the 'Matsyapurana' by mentioning in the commentary of the 'Brahmasanhita' as 'RadhaVrindavaneitéMatsyapuran' renowned critic Sashibhusan Dasgupta has accepted the existence of Radha is 'Mastsypurana' in any one sloka that reads as the following:

Rukminidwaeavathyamaturadhavrindavanovane (Dasgupta, 1956: 116)

Radha name is also available in the Vayupurana, Varahapurana and in the Noradapurana. Similarly, in the 'Shivapurana' depiction of Radha-Krishna is available, where it depicts the secret love of GolokvashineeRadha. In the Shivapurana it is also mentioned that she would be wife of Krishna:

Kalawatisutaradhasaksatgolokvashinee Guptasnehaniba dhhasakrishnapatnibhawishyati. (Shivapurana 3/2/40)

In this way, we may conclude that we do find Radha's description in the Vedas, Upanishada and Puranas. Although the word 'Radha' has not been applied in the form of a proper noun, even then many scholars have said that the Vedic literature is the

हिन्दी साहित्य के चर्चित उपन्यास:
एक आलोचनात्मक अध्ययन



संपादक
डॉ जोनाली बरुवा
डॉ नंदिता दत्त
डॉ अर्चना हाजरिका

प्रथम संस्करण 2026

ISBN 978-93-7329-167-3

© लेखक

मूल्य : ₹ 795/-

प्रकाशक

हंस प्रकाशन

(पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स)

बी-336/1, गली नं. 3, दूस रा पुस्ता

सोनिया विहार, नई दिल्ली-110094

दूरभाष : 9868561340, 7217610640

Email : hansprakashan88@gmail.com

Website : www.hansprakashan.com

विक्रय कार्यालय :

4648/21, अंसारी रोड, दरियागंज

नई दिल्ली-110002

दूरभाष : 7217610640

टाइप सेटिंग : **हर्ष कंप्यूटर्स**, किराड़ी, दिल्ली-86

मुद्रक : **एस.के. ऑफसेट**, दिल्ली

अकेलापन और आत्म पहचान की खोज : पचपन खंभे लाल दीवारे

मालविका शर्मा
सह - प्राचार्य
राधा गोविंद बरुवा
महाविद्यालय गुवाहाटी

सार : पचपन खम्भे लाल दीवारें आधुनिक नारी के मनोविज्ञान, भावनात्मक जटिलता, अकेलापन और आत्म-पहचान या आत्म-संघर्ष की खोज का उत्कृष्ट उदाहरण हैं स इसमें आधुनिक नारी की सामाजिक आर्थिक व्यवस्थाओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया गया है स यह उपन्यास नारी के भीतर पल रहे अकेलेपन, आत्म-संघर्ष और आत्म-पहचान की खोज को गहराई से उद्घाटित करता है स सुषमा का चरित्र एक ऐसी शिक्षित, आत्म-सचेतन और संवेदनशील नारी का प्रतिध्वनि करता है जो सामाजिक बंधनों, नैतिक मान्यताओं और अपने भीतर द्वन्द्व के बीच संतुलन खोजने का प्रयास करती है स समाज द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर रहते हुए भी वह अपने अस्तित्व की स्वतंत्रता चाहती है स यही उसकी आत्म-चेतना और आत्मसंघर्ष का मूल स्वर है स उपन्यास की लाल दीवारे प्रतीक है उन सामाजिक परंपराओं की जो महिलाओं को सीमाओं में बांधती है, जबकि पचपन खंभे उसके जीवन के उन कठोर अनुभवों का प्रतीक है जिन पर उसका अस्तित्व टिका है स इस प्रकार, उपन्यास केवल नारी के व्यक्तिगत संघर्ष का चित्रण नहीं करता, बल्कि स्त्री स्वातंर्त्य, आत्म-संघर्ष और अस्तित्व-बोध की अभिव्यक्ति करती है।

बीज शब्द : अकेलापन, आत्म -पहचान, मनोविज्ञान, अस्तित्व, आत्म-संघर्ष

प्रस्तावना : हिंदी कथा साहित्य में उषा प्रियम्बदा का विशेष स्थान हैं वे उपन्यास और लघु कथाओं के लिए प्रसिद्ध हैं और एक अनुवादक के रूप में भी

अपनी पहचान बनायी हैस उनकी साहित्यिक रचनाएँ सिर्फ कहानियाँ ही नहीं है बल्कि महिलाओं के जीवन की वास्तविकताओं तथा मनोवैज्ञानिक दशाओं की गहन खोज है स उनकी कहानियों के माध्यम से शहरी मध्यम वर्गीय जीवन और उसमें व्याप्त अकेलापन, ऊब और अवसादों का मार्मिक चित्रण हैस उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में अपनी उच्च शिक्षा प्राप्त की और अमेरिका में भी अध्ययन किया स वे एक प्रवासी साहित्यकार हैस उषा प्रियंवदा की गणना हिंदी के उन कथाकारों में होती हैय जिन्होंने भी आधुनिक जीवन की ऊब, छटपटाहट और अकेलापन की स्थिति को अनुभूति के स्तर पर व्यक्त किया हैस इनकी कथा साहित्य सामाजिक मानदंडों की चुनौती देती हैस अपने लेखन के माध्यम से उन्होंने न केवल साहित्य के क्षेत्रों को समृद्ध किया बल्कि सामाजिक परिवर्तन तथा महिलाओं को सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक रूप में सौ बनाने का प्रयास किया स उनकी रचनाओं में शहरी जीवन विशेषकर शहरी परिवारों के अकेलापन ऊब और अवसादों का संवेदनाओं पूर्ण चित्रण देखा जाता हैस उनकी रचनाओं में पचपन खंभे लाल दीवारें एक प्रमुख उपन्यास है स इस उपन्यास का प्रकाशन सन् 1961 में हुआ था स यह उपन्यास एक 33 वर्षीय शिक्षित और आत्म निर्भर महिला सामाजिक और आर्थिक मजबूरियों से उत्पन्न कुंठा और अकेलापन की कहानी हैस उपन्यास में आधुनिक जीवन की विडंबना को दर्शाया गया है कि कैसे व्यक्ति अपनी मर्जी के बिना भी कुछ परिस्थितियों में बंधा रहने को मजबूर होता हैस पचपन खंभे लाल दीवारे की नायिका उस स्त्री की प्रतीक है, जो अपने अस्तित्व को भीड़ में खोने नहीं देतीस''[1]

अकेलापन एक ऐसी भावना है जिसमें लोग तीव्रता से खालीपन और एकांत का अनुभव करते हैंस यह अनुभव लोगों में भरी भीड़ में भी महसूस हो सकता है। यह उपन्यास पचपन खम्भे लाल दीवारों में रहने वाली 33 साल की नारी सुषमा की कहानी है जो अपने चारों ओर की जिम्मेदारियों, समाज के बंधनों और आत्मिक खालीपन से जूझती हैस उपन्यास की पूरी कहानी उसी के ईर्द गिर्द में घूमती रहती हैस उपन्यास के विषय वस्तु का चयन उपन्यासकार ने नारी के मनोवैज्ञानिक एकाकीपन और उसके कानूनों का विश्लेषण तथा नारीवादी दृष्टिकोण से किया है उपन्यास के प्रारंभ में लिखा है कि छात्रवास के पचपन खंभे लाल दीवारें उन परिस्थितियों के प्रतीक है जिनमें रहकर सुषमा को ऊब घुटन का तीखा एहसास होता है, लेकिन फिर भी वह उनसे मुक्त नहीं हो पाती, शायद होना नहीं चाहती, उन परिस्थितियों के बीच जीना ही उसकी नियति हैं स आधुनिक जीवन की यह एक विडंबना है कि जो हम नहीं चाहते वही करने को विवश हैं।

पचपन खम्भे लाल दीवारें उषा प्रियम्बदा की पहला उपन्यास है इस

उपन्यास की नायिका सुषमा एक ऐसी आधुनिक नारी हैय जो जीवन के संघर्ष से जूझती हुई नारी है और वह परिवार के जरूरतों के आगे असहाय हैं स उपन्यास की नायिका सुषमा कॉलेज की प्राध्यापिका है स वह अपने परिवार की एक मात्र कमाने वाली सदस्य हैं। सुषमा ने अपनी शिक्षा पूरी कर कॉलेज में प्राध्यापिका का पद प्राप्त किया हैस वह कॉलेज हॉस्टल की वार्डन भी है स इसलिए वहाँ रहती हैं स उसका जीवन पूरी तरह अनुशासन, जिम्मेदारी और अकेलापन के बीच सीमित हैं। उनके परिवार की आर्थिक स्थिति कमजोर है इसलिए वह अपनी इच्छाओं को त्यागकर परिवार के लिए समर्पित रहती है माँ की दवा या भाई बहनों की पढ़ाई विवाह आदि में ही अपने को निमज्जित रखती है। अपनी नौकरी के साथ-साथ वह अपने परिवार की देखभाल करती है और एक अनुशासित जीवन व्यतीत करती है स यद्यपि वह कॉलेज और हॉस्टल की व्यवस्था में लगी रहती है लेकिन भीतर से वह बहुत थकी और अकेली महसूस करती हैस इसी बीच एक दिन उनकी मुलाकात नील नाम से नाम के युवक से होती हैस नील पढ़ा लिखा समझदार, सुंदर और स्नेही है स वह सुषमा के जीवन में एक नई रोशनी लेकर आया हैस सुषमा उसके संपर्क में पहली बार अपने भीतर किसी छिपी भावात्मक पक्ष को पहचानने लगी। वह धीरे धीरे अनुभव करने लगा कि उसकी जीवन सिर्फ जिम्मेदारियाँ और अनुसासन में नहीं है बल्कि प्यार, अपनापन के लिए भी हैं स सुषमा और नील के बीच एक आत्मीय संबंध बन जाता हैस नील के साथ अपनी खुशी के खातिर फैसला लेने के लिए वह खुद को तैयारी करती है और अपने बारे में सोचना शुरू किया हैस लेकिन सुषमा का मन में द्वंद्व होने लगा। एक ओर उसके मन की चाहत हैं और दूसरी ओर उसका परिवार है और जिम्मेदारी। क्योंकी सुषमा के बिना इस परिवार की खुशहाल जिंदगी कल्पना भी नहीं की जा सकतीस सुषमा की मा उसकी छोटी बहन के शादी के बारे में भी सोचती हैं लेकिन सुषमा की माँ सुषमा के शादी के बारे में नही सोचती और सुषमा के माथे पर सर कर्ज मढ़कर छोटी बेटी नीरू की शादी करवाती है स सुषमा उनके लिए सिर्फ एक कमाऊ वाली आदमी है इसलिये सुषमा सोचती है कि अगर वह नील को अपनाया तो परिवार का क्या होगा इस सोच से वो अपने प्रेम को कुरबान कार देती है नील उससे दूर चला जाता है और सुषमा ही उसे जीवन में लौट आती है जहाँ वही कॉलेज है वही हॉस्टल है, लाल दीवारें और वही पचपन खम्भे स सुषमा के घरवालों के अलावा उसके साथी लेक्चरर और यहाँ तक की उनकी छात्राएँ भी उनके और नील के संबंध को लेकर प्रश्न उठाती है स अगर इतना है कि अब उसके भीतर एक गहरी खामोशी और खालीपन बस गया हैस कहानी

का अंत सुषमा के अकेलेपन और त्याग की पीड़ा में होता हैस वह बाहर से पहले की तरह शांत और ससक्त दिखती लेकिन भीतर से टूटी हुई।

उपन्यास के कथा से यह प्रतीत होता है कि उषा प्रियम्बदा की यह कहानी सिर्फ एक नारी की कहानी नहीं है बल्कि आधुनिक समाज की नारी मानसिकता का सजीव कहानी हैस क्योंकि आज की नारी शिक्षा और नौकरी के क्षेत्रों में आगे तो बढ़ रही है परंतु मानसिक स्तर पर स्वतंत्र नहीं है। सुषमा के मन की जो सूक्ष्म भावनाएं, उसका अंतरदवंद , मजबूरियां, मन की पीड़ा, अकेलापन है वे आज की नारी के मन की प्रतिनिधित्व करती हैस उषा प्रियम्बदा स्वयं एक साक्षात्कार में कहती है मैं अपनी कहानियों में उस स्त्री की बात करती हूँ जो आधुनिक है, पर भीतर अब भी परंपराओं की जकड़ में है।[3]

यद्यपि सुषमा स्वावलंबी महिला है फिर भी वह समाज की एक अदृश्य बंधन से ऐसे लिपटे हुए हैं कि वह अपनी पूरी खुश्शी और अपनी जिंदगी के फैसले भी अपने अनुसार नहीं ले पाती स उसकी जिंदगी में अकेलापन की कुंठा भर गयी है। यह कुंठा कभी कभी बाहर भी निकलती है। किन्तु सुषमा तुरंत अपने आपको संभाल लेती है। उसकी माँ सुषमा के माथे पर सारा कर्ज मारकर छोटी बेटी नीरु की शादी करवाती है। लेकिन कभी उसकी शादी की बात नहीं करती हैंस सुषमा के अंदर सूनेपन की एक टीस है। वह भी पती और बच्चे के साथ संसार बचाना चाहती है। किन्तु परिवार के कोई भी उसका दुख और अकेलापन समझना नहीं चाहता क्योंकि आज भी समाज औरतों से ही सिर बलिदान की उम्मीद रखती हैस यद्यपि समय बदला और औरतों के रहने का तरीकघ बदला मगर समाज की सोच नहीं बदलीस संस्कार और सामाजिक बातें इस तरह महिलाओं के मन हर करती है कि वो खुद को पीछे छोड़ती देती हैस इसमे यह दिखाया गया है कि सुषमा सबके लिए सोचती है लेकिन खुद के बारे में सोचना नहीं चाहतीय क्योंकि उसे अपने बारे में सोचने के लिए डर लगती हैस क्योंकि व परिवार की जिम्मेदारियां मिल जाएगी। इसके अलावा हमारे निजी जीवन में आस पास वाले लोगों के दखघ्ल और उसका मन मस्तिष्क पर प्रभाव वाले पक्ष भी अक्सर ही उपन्यास में मार्मिक रूपसे चित्रि किया है। सुषमा चुप रही अपने मन को समझाकर, दुनिया की आँखों से छिपाकर जिस सत्य को बहुत दबा ढककर रखा था, मौसी उसे अप्रयोजन ही उभार रहीय इस बात की अधिक चर्चा करने से अम्मा नाराज हो जाएगी।[4] इससे पाठकों के मन में यह प्रश्न उठता है कि क्या स्त्री केवल दूसरों के लिए अस्तित्व रखती है या उसका स्वयं का भी कोई स्व है ? सुषमा के जीवन का यह अकेलापन उस

समाज का प्रतीक है, जिसमें नारी को अपनी भावना को व्यक्त करने की अनुमति नहीं है विवाह परिवार और संबंधों के पारस्परिक हादसे में उसके लिए कोई व्यक्तिगत स्थान नहीं बचता स समाज सदैव नारी से कर्तव्यनिष्ठा की अपेक्षा करता है और उसकी संवेदनाओं को अनदेखी करता हैं स सुषमा के भीतर यही विरोधाभास अकेलापन को जन्म देती हैस मन्नू भण्डारी के शब्दों में सुषमा का अकेलापन बाहरी नहीं, भीतर का एक गहरा अंधकार है जो समाज के बंधनों ने उसके चारों ओर खड़ा कर दिया है।[5] सुषमा की अकेलापन सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक विवशताओं के कारण पैदा होता है स वह परिवार के जिम्मेदारियों के कारण अपने व्यक्तिगत जीवन को दबाने के लिए मजबूर है। उसका मन न जाने क्यों डूबने लगता। अपने परिवार का सर बोझ अपने ऊपर लिए सुषमा कापने लगती स तब वह चाह उठती कि दो बाहे उसे भी सहारा देने को है, उस नीरवता ने कुछ अस्फुट शब्द उसे भी सम्बोधन करें।[6]

सुषमा के माध्यम से उपन्यासकार ने यह भी दिखाया है कि अक्सर एक महिला ही दूसरी महिला के जीवन में सवालों का घेरा बना देती है फिर चाहे वो सुषमा की माँ हो या दोस्त हो कि सुषमा के कॉलेज की लड़कियाँ जो कि नील और उसके रिश्तों को तीखा प्रहार करती हैं। सुषमा का अकेलेपन उसका आत्मा संघर्ष का मूल कारण ही है इसलिए कहा जाता है कि स्त्री की स्थिति केवल त्याग और समर्पण नहीं आत्म पहचान की सीढ़ी हैस जब समाज उसे समझ नहीं पाता तो वह भीतर की दुनिया में शरण लेती है और वही से उसकी आत्मा चेतना जागृत होती हैंस यही आत्म चेतना समाज की रुढ़ियों पर प्रश्न उठाने की शक्ति देती है।

उपन्यास का शीर्षक पचपन खंभे लाल दीवारे सुषमा की गतिहीन जीवन का प्रतीक है स खंभे और दिवारे सिर्फ छात्रवास की सीमाएं नहीं है बल्कि उन अदृश्य शक्ति और सामाजिक बंधनों का प्रतीक है जो नारी को स्वतन्त्र रूप से सोचने और जीने से रोकती है। सुषमा इन दीवारों में रहकर भी स्वतंत्रता का सपना देखती है स क्योंकि अकेलापन नारी की कमजोरी नहीं है, उसकी आत्म-चेतना की पहली सीढ़ी है। यह संदेश इस उपन्यास की आत्मा है।[7]

निष्कष : पचपन खम्भे लाल दीवारें आधुनिक नारी के मनोविज्ञान, भावनात्मक जटिलता, अकेलापन और आत्म-पहचान या आत्म-संघर्ष की खोज का उत्कृष्ट उदाहरण हैं स इसमें आधुनिक नारी की सामाजिक आर्थिक व्यवस्थाओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया गया है। यह उपन्यास नारी के भीतर पल रहे अकेलेपन, आत्म-संघर्ष और आत्म-पहचान की खोज को गहराई से

उद्घाटित करता है। सुषमा का अकेलेपन केवल उसकी व्यक्तिगत स्थिति नहीं, बल्कि उस स्त्री वर्ग की सामूहिक चेतना का प्रतीक है जो बंधन से मुक्ति और पहचान की तलाश है।

संदर्भ ग्रंथों की सूची :

1. जैन, डॉ नीलम : उषा प्रियंबदा के उपन्यासों में स्त्री विमर्श पृ. संख्या 45 संस्करण 2002
2. प्रियंबदा, उषा : पचपन खंभे लाल दीवारे यराजकमल प्रकाशनय पृ. संख्या, संस्करण 2000
3. कुमार, शशि प्रभा : उषा प्रियंबदा : सृजन और संवेदनारू राज कमल प्रकाशन, पृस्ठ संख्या 112, संस्करण 2006
4. प्रियंबदा, उषा : पचपन खंभे लाल दीवारे यराजकमल प्रकाशनय पृ. संख्या 26 संस्करण 2000
5. मन्नु भण्डारी : हिन्दी साहित्य में नारी चेतना, पृ. संख्या 72, संस्करण 1984
6. प्रियंबदा, उषा : पचपन खंभे लाल दीवारे, राजकमल प्रकाशनय पृ. संख्या 48 संस्करण 2000
7. खेतान, डॉ. प्रभा : नारी और उसका समाजय पृ. संख्या 109, संस्करण 1995

सहायक ग्रंथों की सूची :

1. प्रियंबदा, उषा पचपन खंभे लाल दीवारे, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000
2. सिंह, ममता - उषा प्रियंबदा के उपन्यासों में नारी मन का द्वनद, वाणी प्रकाशन, 2007
3. खेतान, डॉ. प्रभा नारी और उनका समाज : साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 1995
4. भण्डारी, मन्नु - हिन्दी कथा साहित्य में नारी चेतना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995
5. जैन, डॉ. नीलम

BODHAK

Multidisciplinary Perspectives

A Multilingual Book of Research

Edited by
Dr. Pranjit Kumar Nath
Dr. Malabika Sarma
Dr. Joyanta Deka
Dr. Ashifuddin Ahmed Saikia

Editorial Board

Editors
Dr. Pranjit Kumar Nath, Dr. Malabika Sarma, Dr. Joyanta Deka and Dr. Ashifuddin Ahmed Saikia

Members
Dr. Utpal Kalita
Dr. Karabi Kakati
Archana Borah

Copyright © 2024, R.G.Baruah College, Guwahati, Assam, India

Offices
Bhubaneshwar, Guwahati, Hyderabad, New Delhi, Visakhapatnam

All rights reserved. No part of this book or parts thereof may be reproduced stored in a retrieval system or transmitted in any language or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise without the prior written permission of the copyright owners and the publishers.

The responsibility for the facts stated, opinion expressed, conclusions reached etc. is entirely that of the author. The editors and the publisher accept no responsibility for them.

ISBN: 978-93-95606-87-5

An Initiative of Research and Publication Cell, R.G.Baruah College, Guwahati, Assam, India

Published by Global Publishing House India
90, Saheed Nagar, Bhubaneswar-7,Odisha
H. No.4, Bye lane-7, New Sarania, Gandhi Basti, Guwahati-3, Assam
No. 13-1-1,Vigneshwara Enclave,Anthony Nagar, Maharanipeta, Visakhapatnam-2,AP

असमीया गीत-कविता में स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव

डॉ मालबिका शर्मा

सारांश

भारतवर्ष की अन्य देश की तरह असमीया कविता की एक अलग पहचान है। प्राचीन काल से ही असमीया कविता अपनी विरासत से सम्पन्न है। ग्रामीण गीत-कविता के सहज सरल आनुभूतिक कमनीयता प्रारंभिक स्तर की कविताओ में उपलब्ध है। शंकर-पूर्व युग की कवि माधव कंदली और पीताम्बर, मनकर, दुर्गावर इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। माधव कंदली की कविताओ में जहां छंदोवद्ध वर्णन का सौन्दर्य पाया जाता है वहाँ पीताम्बर, दुर्गावर, मनकर की कविताओं में सरल गीत की व्याकुलता देखने को मिलता हैं। शंकर युग के प्रमुख कवि श्रीमंत शंकरदेव की कविताओं में सात्विक गांभीर्य तथा माधवदेव की कविताओं में प्राचीन विरासत की मौलिकता और काव्यसौष्ठव दिखाई देती हैं।

उन्नीसवी शताब्दी में असमीया कविता नई अनुभूतियों से सजीब होकर अभिव्यक्त हुई हैं। वास्तव में असमिया कविता का विकास एक विचित्र प्रकार की दिशा और दशा तथा विवर्तन और परिवर्तन का इतिहास हैं।

जैसा की साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है। अतः तत्कालीन समाज को उस समय के साहित्य में देखा जाता है ।कवि न समाज का उपेक्षा कर सकता है न अपने युग की। वस्तुतः कवि समसामयिकता से सम्बद्ध रहता है ॥9 वींशती के उत्तरार्ध से प्रारंभ हुए स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव असमीया साहित्य पर भी पड़ने लगा।

स्वाधीनता आंदोलन भारतीय इतिहास की एक ऐतिहासिक घटना है। इस आंदोलन में भारत के अन्य राज्य के साथ-साथ असम ने भी भरपूर योगदान दिया था। परिणामस्वरूप तत्कालीन समय की कविताओं में स्वाधीनता आंदोलन का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव देखा जाता है।

असमीया साहित्य-जगत में देश प्रेम एक उल्लेखनीय पक्ष है, जो प्राचीन काल से पारंपरिक रूप से चली आ रही है और इसका चरम निदर्शन हम आधुनिक

असमीया कविता में देख सकते हैं।

जोनाकी-युग की कवियों ने देश के प्रति असीम प्रेम अभिव्यक्त करने के साथ-साथ देश और समाज की दुर्दशा का चित्र भी दयनीय रूप से चित्रण किया। इसके साथ ही देश के गौरवशाली अतीत का भी गुणगान किया है। इतना ही नहीं इन कवियों ने कविताओ के माध्यम से एक शक्तिशाली, सुंदर और स्वस्थ मातृभूमि की प्रतिस्था की स्वप्न भी देखा हैं।

वास्तव में पराधीनता के समय में मानव के हृदय में सुप्त देश- प्रेम जागृत करने वाले असमीया कवियों में से उल्लेखनीय हें लक्ष्मीनाथ बेज़बरुआ, अंबिका गिरी रायचौधरी, ज्योतिप्रसाद अग्रवाल, विष्णु प्रसाद राभा, नलिनिवाला देवी आदि। इन कवियों की उद्दीपनमय जातीय गीत और कविता ने सभी जाति,धर्म,वर्ण के लोगों को जागृत किया। उक्त प्रमुख कवियों का अनुसरण करते हुए राज्य के विभिन्न स्थानों की जनता ने भी स्वाधीनता से संबंधित गीत, कविताओ की रचना की थी, जो साधारण जनगणों के बीच बहुत लोकप्रिय बनी थी।

वस्तुत: साहित्य में गीत, कविता एक ऐसी विधा है जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। अत: कहा जा सकता है की स्वाधीनता आन्दोलन को प्रभावशाली बनाने में इन गीत, कविताओं ने मुख्य भूमिका अदा की थी।

भारतवर्ष की अन्य भाषाओं की कविताओं की तरह असमिया कविता की एक अलग पहचान हैं। प्राचीन काल से असमीया कविता अपनी विरासत से सम्पन्न हैं। ग्रामीण गीत कविता की सहज सरल आनुभूतिक कमनीयता असमीया कविताओं में उपलब्ध है।

शंकर-पूर्व युग के कवि माधव कंदली , पीताम्बर, मनकर तथा दुर्गावर की कविताएं इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण है।माधव कंदली की कविताओं में जहां छंदोबद्ध वर्णन का सौन्दर्य पाया जाता वहाँ पीताम्बर, दुर्गावर तथा मनकर आदि की कविताओं में सरल गीति व्याकुलता देखने को मिलती हैं। शंकर युग के केन्द्रीय कवि श्री मंत शंकरदेव की कविताओं में सात्विक प्राणमय गांभीर्य तथा माधव देव की कविताओं में हृदयस्पर्शी निर्मल कारुण्य के दर्शन होते हैं ।इसप्रकार ऊपर उल्लेखित कवियों की कविताओं में प्राचीन विरासत की मौलिकता और काव्यसौष्ठव दिखाई देती है।

उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य से प्रभावित असमीया कविता नयी अनुभूतियों से सजीब होकर अभिव्यक्त हुई हैं। फलस्वरूप भावना जगत में परिवर्तन,

विस्तार और क्रांति परिलक्षित हुई है। वैयक्तिक अनुभूति के माध्यम से वहिर्जगत का चित्रण और राष्टीय आंदोलनमुलक स्वदेश प्रेम के गीत और कविता रचे जाने लगे। युग चेतना के मार्ग दर्शक जोनाकी युग के ध्त्रिमूर्तिक्त चंदरकुमार अग्रवाला,लक्ष्मीनाथ बेज़बरुआ हेमचन्द्र गोस्वामी के उदय ने असमीया साहित्य में संजीबनी शक्ति ही प्रदान नहीं किया; अपितु समग्र भाव जगत में एक नवीन स्पंदन ला दिया और एक नवीन चेतना का संचार किया। इससे पहले भी देश प्रेम के उद्धोषक के रूप में आनंद राम ढेकियाल फुकन हेमचन्द्र बरुआ तथा गुनाभिराम बरुआ ने सशक्त रूप में असमीया भाषा को विविध साहित्य रूपों में स्थापित किया पाश्चात्य साहित्य और बांग्ला साहित्य के प्रभाव से प्रभावित असमीया रोमांटिक युग की काव्य धारा के विविध विषय में पराधीनता का विषाद और देश प्रेम भी पूर्ण रूप से अभिव्यक्त हुई हैं।

स्वाधीनता आंदोलन भारतवर्ष के इतिहास की एक ऐतिहासिक घटना है। इस आंदोलन में भारतके अन्य राज्य के साथ -साथ असम ने भी भरपूर योगदान दिया था। जैसा की साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है इसीलिए कवि न समाज की उपेक्षा कर सकता हैं न अपने युग की। वस्तुतः कवि समसामयिकता से सम्बद्ध रहता है। अतः 19 वींशती के उत्तरार्ध से प्रारंभ हुए स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव असमीया कविता में परिलक्षित होना नितांत स्वाभाविक है।

असमीया साहित्य जगत में देश -प्रेम एक उल्लेखनीय पक्ष है , जो प्राचीन काल से पारंपरिक रूप से चली आ रही है और जिसका चरम निदर्शन आधुनिक असमीया कविता में परिलक्षितइस होता है। देश प्रेम की कविताओं में विशेषतः दो उल्लेखनीय तत्व पाए जाते हैं- विद्रोह और आत्मा।चूँकि कवियों के मर्मस्पर्शी हृदय में जिसप्रकार देश के प्रति असीम प्रेम है,उसी प्रकार देश की दुर्दशा के लिए क्षोभ भी है। डॉ सत्येन शर्मा ने अपने क्असमीया साहित्यर समीक्षात्मक इतिवृत्तक्क नामक ग्रंथ में इस संबंध में इसप्रकार कहा है -क्कअतीतर जय गान ,पराधीनतार ग्लानि-अवसाद, जातीय ऐक्यर कारणे उदात्त आह्वान, आन कथात कवितात सवदेश प्रीतिर प्रवाह बेज़बरुआते आरंभ हय आरु स्वाधीनता आंदोलनत सेई भाव-परिपुष्ट हय। विंश शताब्दीर तृतीय- चतुर्थ (1920-40) दशकत तेने भाबर जोवार आहे।शर्मा 287,2004 अर्थात डॉ सत्येन शर्मा के अनुसार देश प्रेम की चरम उत्कर्ष भारत के स्वाधीनता आन्दोलन के प्रारंभिक रूप में हुआ हैं उसका चरम निदर्शन वीशवी शताब्दी की कविताओ में देखा जाता हैं। वस्तुतः 19 वीं शती के उत्तरार्ध से ही स्वाधीनता आन्दोलन का प्रभाव असमीया कविता पर

प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से देखा जा सकता हैं। वास्तव में पराधीनता के समय से ही असमीया कवि तथा गीतिकारों ने कविता और गीतों के माध्यम से जनता के हृदय से सुप्त देश प्रेम जागृत करने का प्रयास किया था। इन कवियों की उद्दीपनामय जातीय गीत और कविता ने सभी जाति, धर्म, वर्ण के लोगों को जागृत किया। वस्तुतः साहित्य में गीत, कविता एक ऐसी विधा है जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। इसीलिए स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने में इन गीत कविताओ ने मुख्य भूमिका अदा की थी। फलस्वरूप भावना जगत में परिवर्तन, बिस्तार और क्रांति परिलक्षित हुई। वैयक्तिक अनुभूति के माध्यम के माध्यम से वहिर्जगत का चित्रण और राष्ट्रीय आंदोलनमुलक स्वदेश प्रेम के गीत और कविता रचे जाने लगे। युग चेतना के मार्ग दर्शक क्जोनाकी युगक्के त्रिमूर्ती चंद्रकुमार अग्रवाल, लक्ष्मीनाथ बेज़बरुआ, हेमचन्द्र गोस्वामी के आविर्भाव ने असमिया साहित्य में संजीवनी शक्ति ही प्रदान नहीं किया, अपितु समग्र भाव जगत में एक नवीन स्पंदन ला दिया तथा एक नवीन चेतना का संचार किया। इससे पहले भी देशप्रेम की उद्घोषक के रूप में आनंदराम धेकियालफुकन, हेमचन्द्र बरुआ तथा गुनाभिराम बरुआ ने सशक्त रूप से असमीया भाषा के विविध साहित्य रूपों को स्थापित किया।

पाश्चात्य साहित्य और बांग्ला साहित्य के प्रभाव से प्रभावित रोमांटिव युग की काव्यधारा के विविध विषयों में पराधीनता, विषाद और देशप्रेम का आह्वान मुख्य विशेषताएं है। स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने के लिए और जनता के हृदय में सुप्त देशप्रेम तथा स्वाधीन भारत का स्वप्न जगाने के लिए नवीन चंद्र बरदलै अंबिकागिरी रायचौधरी ,ज्योतिप्रसाद अग्रवाला, बिष्णु प्रसाद राभा, नलिनीबाला देवी आदि कवि तथा गीतिकारों ने गीत और कविताओं की रचना की। उक्त प्रमुख कवि और गीतिकारो का अनुसरण करते हुए राज्य के विभिन्न स्थानों की जनता ने स्वाधीनता से संबंधित गीत कविताओं की रचना की थी, जो साधारण जनता के बीच बहुत लोकप्रिय बनी।

असम के इतिहास में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता का सूत्रपात संधिक्से माना जाता है। पराधीनता की ग्लानि से पीड़ित असमिया लोगों ने सोमधर कुवर और पियली फुकन के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह की घोषणा की। इसका प्रमाण इस लोकगीत में देखा जा सकता है =

खामति, नमाटि, गारो, खसियाटी
लगते दफला, मिरि

रंगनचिला हाबिते बर मेल पातिछे
फिरिंगिक धरोगोई बुलि। (बरदलै 1.2010)

सन 1857 में भारतवर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध जिस विद्रोह की घोषणा हुई थी, उस विद्रोह में असम से मणिराम देवान शहीद हुए थे। निम्न उल्लेखित लोकगीत इसका प्रमाण है-

सोनर धोवाखोवात खालि तइ मणिराम
रूपर धोवाखोवात खालि
किनो रजाघरत द्रोह आचरिलि
डिडित चिपजरी ललि।। (बरदलै, 2=2010)

इसके अतिरिक्त फुलगुरिर धाबा, पथरूघातर रण आदि में भी असम की जनता ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह किया था और विदेशी के शासन और शोषण के विरुद्ध जन आंदोलन प्रारंभ किया था। महात्मा गांधी के नेतृत्व में पूरे भारतवर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन प्रारंभ हुआ। असम में भी नवीन चंद्र बरदलै, चंद्रनाथ शर्मा, तरुणराम फुकन, गोपीनाथ बरदलै आदि के नेतृत्व में असम की जनता ने असहयोग

आन्दोलन में पूरी तरह योगदान किया। कामरूप जातीय उन्नति विधायिनी सभाक्उन्हने के माध्यम से अंबिकागिरि राइचौधारी ने असहयोग आंदोलन में भाग लेने के लिए उदात्त भाषण देकर जनता को आह्वान किया। असम के अधिकांश लोगों ने आंदोलन के प्रचार - प्रसार कार्य में भाग लेते थे। भारतवर्ष के स्वाधीनता आंदोलन का प्रतिफलन जिन कवियों की कविता और गीतों में प्रतिफलन हुआ है, उनमें से सबसे प्रथम लक्ष्मीनाथ बेज़बरुवा का नाम उल्लेख किया जा सकता है। उन्होंने अपने कविता और गीतों के माध्यम जनता के हृदय में देश-प्रेम जगाने के प्रयास किया था। निम्नलिखित गीत इस तथ्य को प्रमाणित करता है। यथा-

आमि असमीया नहउ दुखीया
किहर दुखीया हम ?
सकलो आछिल सकलो आछे
नुबुजू नलओ गम। (डेका हाजरिका)

अर्थात हम असमीया दिन -हीन नहीं है। दिन हीन क्यों होंगे। हमारे पास सब कुछ हैं । इसीलिए हम इसकी थाह लेना चाहते।

स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी कर्म वीर नबीन चंद्र बरदलै आंदोलन के साथ -साथ कविता और गीत लिखा करते थे। भारत वर्ष को पराधीनता से मुक्त

करना ही उनके गीतों का मूल लक्ष था। यथा -

आमार विषम पण
पूर्ण स्वाधीनता लभिम लभिम
आगत थई मरण। (तालुकदार .41.1995)

अर्थात हमारा मूल लक्ष स्वाधीनता है। स्वाधीनता के लिए हम मरने के लिए भी तैयार हैं।

स्वाधीन भारत स्वतंत्र भारत
बताहट बाजे सुर
भारत संतान जीयाई थाकोते
इ सुर नपरे उर । (बरदलै.25.2010)

आजि बंदों की छन्देरे समागत विराट
नर नारायण रूप
लांछित पराधीन कुंचित चित-मन नाइक
फूल-चंदन-धूप नाइ फूल-चंदन- धूप। (बरदल, 32.2010)

(अर्थात आज हमारे सामने नर नारायण के विशाल रूप है। किस छन्द से उनकी वंदना की जाए। क्योंकि आज हम पराधीन है, लांछित है। इसीलिए हमारा मन संकोचित हो गया है। आज वंदना करने के लिए हमारे पास फूल-चंदन,धूप नहीं है।)

कवि रायचौधुरी ने देश के युवावर्ग को देश की स्वाधीनता के लिए जागृत करने के लिए निम्न लिखित कविता के माध्यम से आह्वान किया-

जाग डेका तेज, वज्र कठिन
भाङिपुनु गढ़ा हातूरी लोइ
स्वदेश सेवात भंदामी बोर
भाङिउरी जक चूर्ण हय। (बरदलै.32.2010)

(अर्थात हे युवा शक्ति! आलस्य त्याग कर पुनः हठौरा लेकर निर्माण करो। क्योंकि देश सेवा में भंडामी नहीं होना चाहिए।)

महात्मा गांधी जब गुवाहाटी आए थे तब नवीनचंद्र बरदलै ने अंबिकागिरी रायचौधुरी का परिचय गांधीजी के साथ इस प्रकार कराया था की इन्होंने आज से पाँच/छ साल पहले से ही गीतों के माध्यम से जनता के बीच स्वाधीनता आंदोलन के अहिंस- तत्व का प्रचार-प्रसार में लगे रहे।

सन 1921 में कवि को बंदी बनाकर जेल में रखा गया। जेल में शौचालय साफ करते समय उन्होंने कविता के माध्यम देश की जनता को आह्वान करने की प्रयास किया की अगर जनता अभी स्वाधीनता के प्रति सचेत नहीं होंगी तब विश्व दरबार में भारतवर्ष का कोई स्थान नहीं रहेगा। यथा -

वीर वेसेरे धर झारू धर
जातिर जीवन कर मनोहर
सारि पुचि चुके कोने
जत जि आछे जाहि जाबर।
नहले जे विश्व सभात नहब तोर भार ठाइ। (बरदलै.35.2010)

(अर्थात वीर वेश धारण करके जाति को साफ करो। जिसप्रकार झारू से एक स्थान का कूड़ा-कटकर साफ किया जाता है, उसी प्रकार देश के कोने-कोने करो, नहीं तो विश्व दरबार में बैठने के लिए स्थान नहीं मिलेगा।)

स्वाधीनता आंदोलन के समय का एक उल्लेखनीय कवि है- ज्योतिप्रसाद अग्रवाल। जिनके द्वारा रचित गीत और कविता ने असहयोग आंदोलन को नवीन चेतना प्रदान किया था। उदाहरण के रूप में उनके द्वारा रचित निम्नलिखित गीत ले सकते है -

गाँधीर कथा शुनिबले सदाय हुचियार
मइ भलन्टियार
उजनित बोले साइट गहरी (सत्याग्रह)
नमनीत भेलेनडार
कोनोए बोले चेछासेवक
तथापिऊ मूर गरम बुकुत स्वराजर जुई
ज्वलिछे भमक भमक
स्वाधीनता आनिबले
देशत लगाऊ खलक। (बरदलै.45.2010)

(अर्थात गांधीजी का आदेश सुनने के लिए स्वयं सेवक सदा सावधान रहते है। कोई इन्हें सत्याग्रही भेलेनडार और कोई स्वेचासेवक कहते है। जो भी हो उनके हृदय में स्वराज्य की आग धधक रही है और स्वाधीनता लाने के लिए देश में हलचल मचाने को तैयार हैं।

असमीया जाति को प्रेरणा देने के लिए वे लिखते हैं -

लूइटर पाररे आमि डेकालरा
मरिबले भय नाइ।

मुकुटि मेघर महान मेजि
तेजाल फिरींगती छाइ

आमि आगे बाढ़ि
डिड़ि पाति पाति
तेजरे बलिशाल जामे बुलाइ। (बरदलै.34.2010)

ज्योति प्रसाद अग्रवाल के साथ साथ असम के स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी कवि के रूप में विष्णु प्रसाद राभा का नाम ले सकते हैं। उनके द्वारा रचित ओज मयी गीतों ने जनता के हृदय को स्वाधीनता के लिए प्रेरणा दिया था।

यथा -

'अ असमीया डेका दल

असमीया समनीया आगबाढ़ि जाऊँ बल
आगबाढ़ि जाऊँ बलक्क (दास .137.2008)

(अर्थात हे असमीया तरुण दल ! हम एकसाथ आगे बढ़ेंगे।)

स्वाधीनता आंदोलन में नलिनी बाला देवी की भूमिका भी उल्लेखनीय है। असहयोग आंदोलन में उन्होंने सक्रिय भूमिका निभायी थी। जिस दिन भारत वर्ष की स्वाधीनता घोषणा की गयी थी,उसी दिन ही कवि ने निम्नलिखित गीत की रचना की थी। यथा -

पोनद्धर अगस्तर मुक्तिर प्रथम प्रभात
हिमाद्रिर शिखरत त्रिरंगा पताका उरे दुंदुभि ध्वनित। (देवी. 213.2012)

(अर्थात पन्द्रह अगस्त स्वाधीन भारत की प्रभात। हिमालय शिखर में झंडा लहर रहा है।)

इसके अतिरिक्त कनक चंद्र शर्मा, पद्मधर चलिहा के ओजमय गीतों ने स्वाधीनता आंदोलन को शक्तिशाली बनाया था। उदाहरण के रूप में पद्म धर चलिहा के निम्न लिखित गीत उल्लेखनीय है -

सौ जे स्वराज निचान
उन्नत शिरे होवा आगुवान। (बरदलै.64,2010)

(अर्थात स्वराज्य का झण्डा लहरा रहा है। इसीलिए शिर उठाकर आगे बढ़ो।)

इन प्रमुख कवियों के अतिरिक्त अनेक कवि तथा गीतिकार है, जिहोने भी

स्वाधीनता के प्रति जनता को जागृत करने के लिए गीत और कविता रचना करते थे।

अतः उनके गीत और कविताओं में भी स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव देखा जाता है। यथा -

42 चनते अ कनकलता
गाँधीजीर वाणीरे अक्क कनकलता
लैछिला आशीर्वाद, अक्क कनकलता
करिला एम,भि पाछ, अक्क कनकलता
झंडा उराऊते प्राणटि एरिला।' (बरदलै.83.2010)

(अर्थात सन 1942 में गांधीजी के वाणी से आशीर्वाद पुष्ट कनकलता ने एम. भि पास किया था। किन्तु त्रिरंगा झण्डा लहराते समय प्राण त्याग किया।

पानवारीत बागरिल गाड़ी
बाबाजीए खुडाले डाढ़ी।।
हुचरी बाबु उ दलौ चराई
गाँधीर नाम लोई आह उलाइ।।

विवाह गीत का उदाहरण देखिए -

बारिते फुलिछे अ मन तरा
इंद्रजीत मालती,अ मन तरा
स्वराज पाबलोई, अ मन तरा
जतर नेऊठनी हाते हाते धरा।

इसके अतिरिक्त अनेक अनाम कवि के गीत और कविता है, जिसमें स्वाधीनता आंदोलन का प्रतिफलन देखा जा सकता है।

निष्कर्ष = ऊपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष रूप से हम यह कह सकते हैं कि असमीया कविता और गीतों में स्वाधीनता आंदोलन का पूर्ण प्रतिफलन पाया जाता है। जैसा कि साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है, इसीलिए कवि न समाज की उपेक्षा कर सकता है,न अपने युग की। वस्तुतः कवि समसामयिकता से सम्बद्ध रहता है।कविता तथा गीत एक ऐसी विधा है, जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। इसीलिए पराधीनता के समय में देशवासियों के हृदय में सुप्त देश -प्रेम जगाने के लिए कवियों ने ओजमय गीत-कविताओं की रचना की थी। इन गीत- कविताओं से अनुप्रेरित अनेक अनाम कवियों ने बिहूगीत, विवाह गीत आदि में स्वाधीनता आंदोलन की भावना को व्यक्त किया था। अतः तत्कालीन

समय के अधिकांश गीत -कविताओं में स्वाधीनता आंदोलन की पूर्ण छवि देखा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथों की सूची

1. गगई, लीला (संपा)- आधुनिक असमीया साहित्य परिचय, बनलता, 2002
2. डेका हजारिका, करबी - असमीया कविता, बनलता2006
3. देवी, नलिनी बाला - एरिअहा दिनबोर, लयारच बुक स्टाल, 2012
4. दास, योगेश तथा अन्य (सम्पा) - अम्बिकागिरि रायचौधुरी, असम प्रकाशन परिषद, 1968
5. पुजारी, डॉ.अर्चना (सम्पा) - असमीया कवितार विचार विश्लेषण, ज्योति प्रकाशन, 2000
6. दास,योगेश तथा अन्य (सम्पा) - विष्णु प्रसाद राभा, राभा रचनावली, प्रकाशन संघ, 2008
7. पुजारी, डॉ.अर्चना (सम्पा) - असमीया कवितार विचार विश्लेषण, ज्योति प्रकाशन, 2000
8. फुकन, नीलमणि (सम्पा) - कुरि शतिकार असमीया कविता, असम प्रकाशन परिषद,2005
9. बरदोलोई, निर्मलप्रभा (सम्पा) - स्वाधीनता संग्रामर असमीया गीत और कविता, साहित्य अकादमी, 2010
10. शर्मा, डॉ सत्येन -असमीया साहित्यर इतिवृत,
11. शइकिया, नगेन - असमीया कविता आरु अन्यान्य विषय, चंद्र प्रकाश, 1966
12. हाजरिका, बिमल कुमार - रूपकोवर, कलागुरु, सुधाकण्ठ आरु अन्यान्य, वाणी प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 2011

REFRAMING WOMANHOOD

DISCOURSES, IDENTITIES AND RESISTANCE

Edited by
KABITA BHUYAN
JINI RANI BORO

Copyright © May, 2026, Editors

Editorial Board:

Advisors
Dr. Pranjit Kumar Nath
Kakoli Chetia
Dr. Malabika Sarma
Sarmistha Das

Editors
Kabita Bhuyan
Jini Rani Boro

Offices:
Bhubaneswar, Guwahati, Hyderabad, New Delhi, Visakhapatnam

All rights reserved. No part of this book or parts thereof may be reproduced stored in a retrieval system or transmitted in any language or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise without the prior written permission of the copyright owners and the publishers.

The facts stated and opinions expressed in this book are the sole responsibility of the authors. The editors and the publisher are not liable to any person or entity with respect to any loss or damaged caused, or alleged to have been caused by the articles included in this volume.

ISBN: 978-93-47586-30-9

Published by Global Publishing House India, Door No. 13-1-1, Vigneshwara Enclave, Anthony Nagar, Maharanipeta Visakhapatnam-2, AP, India. On behalf of Women's Studies Cell, R G Baruah College, Fatasil Ambari, Guwahati-781025

उषा प्रियंबदा की नारी पात्रों में आत्मनिर्णय की चेतना :'पचपन खंभे लाल दीवारे' और 'रुकोगी नहीं राधिका' के संदर्भ में

*डॉ मालबिका शर्मा**

प्रस्तावना : नारी स्वतंत्रता के इस युग में नारी का चतुर्मुखी विकाश प्रारंभ हुआ हैं। नारी ने पूर्ण रूप से आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। संविधान ने उसे समान अधिकार भी प्रदान किए है। नारी अपना पृथक व्यक्तित्व लेकर उन्नति की ओर अग्रसर हुई। इसीलिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नारी द्वारा रचित कहानी, उपन्यास साहित्य के विषयों में परिवर्तन देखा जाता है। उषा प्रियंबदा इसी परिवर्तनशील समाज की कथाकार हैं। हिंदी कथा साहित्य में उषा प्रियम्बदा का विशेष स्थान हैं। वे उपन्यास और लघु कथाओं के लिए प्रसिद्ध हैं और एक अनुवादक के रूप में भी अपनी पहचान बनायी है। उनकी साहित्यिक रचनाएँ सिर्फ़ कहानियाँ ही नहीं है बल्कि महिलाओं के जीवन की वास्तविकताओं तथा मनोवैज्ञानिक दशाओं की गहन खोज है। उनकी कथा साहित्य के माध्यम से शहरी मध्यम वर्गीय जीवन और उसमें व्याप्त अकेलापन, ऊब और अवसादों का मार्मिक चित्रण व्यक्त किया गया है। उन्होंने अंग्रेज़ी साहित्य में अपनी उच्च शिक्षा प्राप्त की और अमेरिका में भी अध्ययन किया। वे एक प्रवासी साहित्यकार हैं। इनकी कथा साहित्य सामाजिक मानदंडों को चुनौती देती हैद्य अपने लेखन के माध्यम से उन्होंने न केवल साहित्य के क्षेत्रों को समृद्ध किया; बल्कि सामाजिक परिवर्तन तथा महिलाओं को सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक रूप में सम्पूर्ण बनाने का प्रयास किया। उनकी रचनाओं में 'पचपन खंभे लाल दीवारें' और रुकोगी नहीं राधिका प्रमुख उपन्यास हैं। पचपन खंभे लाल दीवारेंक्का प्रकाशन सन 1961 में हुआ था। यह उपन्यास एक 33 वर्षीय

*सहयोगी प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, आर.जी.बरूवा महाविद्यालय

शिक्षित और आत्म निर्भर महिला की सामाजिक और आर्थिक मजबूरियों से उत्पन्न कुंठा और अकेलापन की कहानी है। उपन्यास में आधुनिक जीवन की विडंबना को दर्शाया गया है कि कैसे व्यक्ति अपनी मर्ज़ी के बिना भी कुछ परिस्थितियों में बंधा रहने को मजबूर होता है। पचपन खंभे लाल दीवारे की नायिका उस स्त्री की प्रतीक है, जो अपने अस्तित्व को भीड़ में खोने नहीं देती। (जैन,2002:45)

उनकी दूसरी उपन्यास 'रुकोगी नहीं राधिका' में कथाकार ने अस्मिता की तलाश करनेवाली नारी को चित्रित किया है। उपन्यास की नायिका राधिका की कथा एक ऐसी स्त्री की कथा है जो अपने में उलझ गई और अपनी खोज में अपने ही भीतर बैठकर यात्रा कर रही है।

नारी की आत्म निर्णय की चेतना से तात्पर्य सिर्फ अधिकारों के बारे में जागरूकता नहीं, बल्कि उस अधिकारों का प्रयोग करते हुए अपनी सोच और भावनाओं को व्यक्त करने की शक्ति है जो उसे स्वतंत्र व्यक्ति बनाती है और अपने जीवन से जुड़े निर्णय स्वयं लेने की क्षमता होती है। अर्थात नारी को अपने जीवन के सभी पहलुओं जैसे शिक्षा, विवाह, केरियर, व्यक्तिगत विचार आदि में स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए; जिससे वह अपनी अस्मिता, सम्मान और स्वावलंबन स्थापित कर अपना अस्तित्व पहचान सके। उषा प्रियंबदा के उपन्यासों की नारी पात्रों में आत्म निर्णय की चेतना सशक्त रूप से चित्रित होती है।

प्रस्तुत आलेख में उल्लेखित उनकी प्रथम उपन्यास पचपन खंभे लाल दीवारे (1962) की प्रमुख नारी पात्र है- सुषमाद्य उपन्यास की पूरी कहानी उसी के इर्द-गिर्द में घूमती रहती है। उपन्यास के विषय वस्तु का चयन उपन्यासकार ने नारी के मनोवैज्ञानिक एकाकीपन और उसके कानूनों का विश्लेषण नारी वादी दृष्टिकोण से किया है। उपन्यास के प्रारंभ में लिखा है कि ब्छात्रावास के पचपन खंभे लाल दीवारें उन परिस्थितियों के प्रतीक है जिनमें रहकर सुषमा को ऊब घुटन का तीखा एहसास होता है, लेकिन फिर भी वह उनसे मुक्त नहीं हो पाती, शायद होना नहीं चाहती, उन परिस्थितियों के बीच जीना ही उसकी नियति हैं। आधुनिक जीवन की यह एक विडंबना है कि जो हम नहीं चाहते वही करने को विवश हैं।" (प्रियंबदा, 2000:3)

इस उपन्यास की नायिका सुषमा एक ऐसी आधुनिक नारी है; जो जीवन के संघर्ष से जूझती है और वह परिवार के ज़रूरतों के आगे असहाय हैं। उपन्यास की नायिका सुषमा कॉलेज की प्राध्यापिका है। वह अपने परिवार की एक मात्र कमाने वाली सदस्य हैं। सुषमा ने अपनी शिक्षा पूरी कर कॉलेज में प्राध्यापिका का पद प्राप्त

किया है। वह कॉलेज हॉस्टल की वार्डन भी है। इसलिए वहाँ रहती हैंद्य उसका जीवन पूरी तरह अनुशासन, ज़िम्मेदारी और अकेलापन के बीच सीमित हैं। उनके परिवार की आर्थिक स्थिति कमज़ोर है इसलिए वह अपनी इच्छाओं को त्यागकर परिवार के लिए समर्पित रहती है। माँ की दवा या भाई बहनों की पढ़ाई, विवाह आदि में ही अपने को निमज्जित रखती है। अपनी नौकरी के साथ-साथ वह अपने परिवार की देखभाल करती है और एक अनुशासित जीवन व्यतीत करती है। यद्यपि वह कॉलेज और हॉस्टल की व्यवस्था में लगी रहती है लेकिन भीतर से वह बहुत थकी और अकेली महसूस करती है। इसी बीच एक दिन उनकी मुलाक़ात नील नाम के युवक से होती है। नील पढ़ा लिखा समझदार, सुंदर और स्नेही है। वह सुषमा के जीवन में एक नई रोशनी लेकर आया है। सुषमा उसके संपर्क में पहली बार अपने भीतर किसी छिपी भावात्मक पक्ष को पहचानने लगी है। वह धीरे-धीरे अनुभव करने लगी कि उसकी जीवन सिर्फ ज़िम्मेदारियाँ और अनुशासन में नहीं है बल्कि प्यार, अपनापन के लिए भी हैं। सुषमा और नील के बीच एक आत्मीय संबंध बन जाता है। नील के साथ अपनी खुशी के खातिर फैसला लेने के लिए वह खुद को तैयार करती है और अपने बारे में सोचना शुरू किया है। लेकिन सुषमा का मन में द्वंद्व होने लगा है। एक ओर उसके मन की चाहत हैं और दूसरी ओर उसका परिवार है और ज़िम्मेदारी है। क्योंकि सुषमा के बिना इस परिवार की खुशहाल ज़िंदगी कल्पना भी नहीं की जा सकती। सुषमा की माँ उसकी छोटी बहन के शादी के बारे में भी सोचती हैं लेकिन सुषमा की माँ सुषमा के शादी के बारे में नहीं सोचती और सुषमा के माथे पर सर कर्ज मढ़कर छोटी बेटी नीरू की शादी करवाती है। सुषमा उनके लिए सिर्फ़ एक कमाऊ वाली आदमी है। इसलिये सुषमा सोचती है कि अगर वह नील को अपनाया तो परिवार का क्या होगा इस सोच से वह अपने प्रेम को कुरबान कर देती है। नील उससे दूर चला जाता है और सुषमा ही उसे जीवन में लौट आती है जहाँ वही कॉलेज है वही हॉस्टल है, लाल दीवारें और वही पचपन खम्भे। उषा प्रियंवदा की दूसरे उपन्यास 'रुकोगी नहीं राधिका' (1967) की नायिका राधिका एक आधुनिक नारी है; जिन्होंने सामाजिक, पारिवारिक और भावनात्मक बंधनों के बीच भी अपने व्यक्तित्व और स्वाभिमान को बनाए रखने की कोशिश कर रही है। राधिका शिक्षित, संवेदनशील और आत्म-सम्मानी स्त्री हैं। वह अपने जीवन को केवल परंपरागत सीमाओं में बांधकर नहीं दिखती है। जीवन की विभिन्न अपेक्षाओं के अतिरिक्त राधिका के जीवन में आत्म-खोज की प्रक्रिया मुख्य आयाम रही है। राधिका अपने पिता द्वारा दूसरी शादी करने के कारण घर छोड़ देती है और अमेरिका चली जाती है। वहाँ पीएचडी करने के बाद घर वापस

आती हैद्य लेकिन घर वापस आकर भी वह असंतोष रही है क्योंकि अपनी माँ को खोने के बाद राधिका स्वाभाविक रूप से अपने पिता के करीब आ जाती है द्य लेकिन जब उनके पिता अपनी काफी छोटी छात्रा से शादी किए तो राधिका को विश्वासघात का एहसास होता है। अमेरिका में एक पत्रकार के साथ संबंध रहा था। किन्तु यह रिश्ता भी लंबे समय तक नहीं चलता; फिर घर वापस लौटने पर भी उसने खंडित वास्तविकता का सामना किया। यद्यपि वह अपनी मर्जी से जीना चाहती ,पर पारिवारिक और सामाजिक बंधनों में फंस जाती है। राधिका का विवाह एक ऐसे पुरुष से होता है जो उसके व्यक्तित्व और स्वतंत्र सोच को पूरी तरह समझ नहीं पाता। वैवाहिक जीवन में राधिका को यह महसूस होता है कि नारी से आज भी समाज त्याग सहनशीलता और समझौते की आशा करते है। अंत में राधिका के जीवन में निर्णायक मोड़ आता है। वह नौकरी और आत्म निर्भरता के माध्यम से अपने जीवन को नया आधार देती है और परिस्थितियों के सामने आगे झुकने के बजाय उनसे टकराने का साहस करती है।

उषा प्रियंवदा की उपन्यासों की कथानकों से यह प्रतीत होता है कि उनकी कहानी सिर्फ़ एक नारी की कहानी नहीं है बल्कि आधुनिक समाज की नारी की मानसिकता का सजीव चित्रण है। क्योंकि आज की नारी शिक्षा और नौकरी के क्षेत्रों में आगे तो बढ़ रही है परंतु मानसिक स्तर पर स्वतंत्र नहीं है। उन्होंने उपन्यासों में अस्मिता की तलाश करने वाली नारी को अंकित किया है। पचपन खंभे लाल दीवारे शीर्षक उपन्यास में सुषमा के मन की जो सूक्ष्म भावनाएं, उसका अंतरद्वन्द, मजबूरियां, मन की पीड़ा, अकेलापन है वे आज की नारी के मन की प्रतिनिधित्व करती है। उषा प्रियम्बदा स्वयं एक साक्षात्कार में कहती है: मैं स्वयं अपनी कहानियों में उस स्त्री की बात करती हूँ जो आधुनिक है, पर भीतर अब भी परंपराओं की जकड़ में है।" (कुमार, 2006:112)

यद्यपि सुषमा स्वावलंबी महिला है फिर भी वह समाज की एक अदृश्य बंधन से ऐसे लिपटे हुए हैं कि वह अपनी पूरी खुशी और अपनी ज़िंदगी के फ़ैसले भी अपने अनुसार नहीं ले पाती। उसकी जिंदगी में अकेलापन की कुंठा भर गयी है। यह कुंठा कभी-कभी बाहर भी निकलती है। किन्तु सुषमा तुरंत अपने आपको संभाल लेती है। उसकी माँ सुषमा के माथे पर सारा कर्ज़ मारकर छोटी बेटी नीरु की शादी करवाती है द्य लेकिन कभी उसकी शादी की बात नहीं करती हैं। सुषमा के अंदर सूनेपन की एक टीस है। वह भी पति और बच्चे के साथ संसार बचाना चाहती है। किन्तु परिवार के कोई भी उसका दुख और अकेलापन समझना नहीं चाहता क्योंकि आज

भी समाज औरतों से ही सिर बलिदान की उम्मीद रखती है। यद्यपि समय बदला और औरतों के रहने का तरीक़ा बदला मगर समाज की सोच नहीं बदली है। संस्कार और सामाजिक बातें इस तरह महिलाओं के मन हर करती है कि वो खुद को पीछे छोड़ती देती है। इसमें यह दिखाया गया है कि सुषमा सबके लिए सोचती है लेकिन खुद के बारे में सोचना नहीं चाहती; क्योंकि उसे अपने बारे में सोचने के लिए डर लगती है। क्योंकि परिवार की ज़िम्मेदारियाँ उसके लिए ज्यादा महत्वपूर्ण है। इसके अलावा हमारे निजी जीवन में आस पास वाले लोगों के दख़ल और उसका मन मस्तिष्क पर प्रभाव वाले पक्ष भी अक्सर ही उपन्यास में मार्मिक रूप से चित्रित किया है। सुषमा चुप रही अपने मन को समझाकर, दुनिया की आँखों से छिपाकर जिस सत्य को बहुत दबा ढककर रखा था, मौसी उसे अप्रयोजन ही उभार रही; इस बात की अधिक चर्चा करने से अम्मा नाराज हो जाएगी" (प्रियंबदा, 2000:26)

इससे पाठकों के मन में यह प्रश्न उठता है कि क्या स्त्री केवल दूसरों के लिए अस्तित्व रखती है या उसका स्वयं का भी कोई स्व है? सुषमा के जीवन का यह अकेलापन उस समाज का प्रतीक है, जिसमें नारी को अपनी भावना को व्यक्त करने की अनुमति नहीं है विवाह परिवार और संबंधों के पारस्परिक हादसे में उसके लिए कोई व्यक्तिगत स्थान नहीं समाज सदैव नारी से कर्तव्यनिष्ठा की अपेक्षा करता है और उसकी संवेदनाओं को अनदेखी करता हैं। सुषमा के भीतर यही विरोधाभास अकेलापन को जन्म देती है। मन्नू भण्डारी के शब्दों में सुषमा का अकेलापन बाहरी नहीं, भीतर का एक गहरा अंधकार है - जो समाज के बंधनों ने उसके चारों ओर खड़ा कर दिया है।' (भण्डारी :1984 :74)

सुषमा की अकेलापन सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक विवशताओं के कारण पैदा होता है। वह परिवार के जिम्मेदारियों के कारण अपने व्यक्तिगत जीवन को दबाने के लिए मजबूर है। 'उसका मन न जाने क्यों डूबने लगता है। अपने परिवार का सर बोझ अपने ऊपर लिए सुषमा काँपने लगती है। तब वह चाह उठती कि दो बाहे उसे भी सहारा देने को है, उस नीरवता ने कुछ अस्फुट शब्द उसे भी सम्बोधन करें।" (प्रियंबदा,2000 : 48)

सुषमा के माध्यम से उपन्यासकार ने यह भी दिखाया है कि अक्सर एक महिला ही दूसरी महिला के जीवन में सवालों का घेरा बना देती है फिर चाहे वो सुषमा की माँ हो या दोस्त हो कि सुषमा के कॉलेज की लड़कियाँ जो कि नील और उसके रिश्तों को तीखा प्रहार करती हैंद्य सुषमा का अकेलेपन उसका आत्मा संघर्ष

का मूल कारण ही है इसलिए कहा जाता है कि स्त्री की स्थिति केवल त्याग और समर्पण नहीं आत्म पहचान की सीढ़ी हैद्य जब समाज उसे समझ नहीं पाता तो वह भीतर की दुनिया में शरण लेती है और वही से उसकी आत्मा चेतना जागृत होती हैंद्य यही आत्म चेतना समाज की रुढ़ियों पर प्रश्न उठाने की शक्ति देती हैद्य

उपन्यास का शीर्षक 'पचपन खंभे लाल दीवारे' सुषमा की गतिहीन जीवन का प्रतीक है। खंभे और दिवारे सिर्फ छात्रावास की सीमाएं नहीं है बल्कि उन अदृश्य शक्ति और सामाजिक बंधनों का प्रतीक है, जो नारी को स्वतन्त्र रूप से सोचने और जीने से रोकती है। सुषमा इन दीवारों में रहकर भी स्वतंत्रता का सपना देखती है। क्योंकि अकेलापन नारी की कमजोरी नहीं है, उसकी आत्म-चेतना की पहली सीढ़ी है। यह संदेश इस उपन्यास की आत्मा है।' (खेतान, 1995:109)

'रुकोगी नहीं राधिका' की नायिका राधिका के माध्यम से उषा प्रियंवदा ने आधुनिक नारी के अंतरद्वन्द को बड़ी सूक्ष्मता से चित्रण किया है और आधुनिक परिवेश में उदित नारी राधिका का चित्रण किया है। इस उपन्यास में स्वतंत्रता के बाद जो परिवर्तन नारी जीवन में आये (बिना विचारे) पुराने मूल्यों को नकारने तथा नए मूल्य को आत्मसात करने की परिणाम सूक्ष्मता से व्यक्त किये है। उषा प्रियंवदा के शब्दों में - एक ऐसी स्त्री का जो कि अपने में उलझ गयी है और अपने पाने की खोज में उसे अपने ही अंदर बैठकर खोज करनी है। राधिका का निपट अकेलापन और भारत में अपने को उखड़ा उखड़ा पान मेरी अपनी अनुभूतियाँ थीं जिन्हें कि मैं लाड़-प्यार के बावजूद नकार नहीं सकें सों यह नारी के अकेले होने की स्थिति है।' (शुक्ल, 2007: 66)

राधिका का वैवाहिक जीवन सुखमय नहीं थी। विवाहित जीवन में राधिका अनुभव करती है कि विवाह उसकी आत्मिक स्वतंत्रता में बाधक है, इसीलिए वह साहसपूर्वक अपने लिए अलग मार्ग चुनती है। यही उसका आत्मनिर्णय है वह मानसिक रूप से अकेली पड़ जाती है। इस अकेलेपन के बीच राधिका के के भीतर आत्मसंघर्ष शुरू होता हैद्य 'अकेलापन अब उसके लिए डर नहीं था, बल्कि पहचान बता जा रहा था (प्रियंवदा, 2015:112) राधिका का संघर्ष मूलतः अपनी अस्मिता की खोज है वह समाज द्वारा स्वीकृत 'आदर्श नारी' की छवि को अस्वीकार करती है। इसीलिए पारंपरिक सामाजिक बंधनों, पारिवारिक अपेक्षाओं तथा वैवाहिक दबावों के बीच अपनी अस्मिता और स्वतंत्र अस्तित्व की खोज करती दिखाई देती है। उपन्यास की शीर्षक नायिका की दृढ़ संकल्प और जिजीविषा का प्रतीक है। राधिका सामाजिक

दबावों के आगे रुकती नहीं है उसका जीवन निरंतर आगे बढ़ने की चेतना से प्रेरित है।

निष्कर्ष: पचपन खम्भे लाल दीवारें और 'रुकोगी नहीं राधिका' आधुनिक नारी के मनोविज्ञान, भावनात्मक जटिलता, अकेलापन और आत्म-पहचान या आत्म-संघर्ष की खोज का उत्कृष्ट उदाहरण हैं इसमें आधुनिक नारी की सामाजिक आर्थिक व्यवस्थाओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया गया है। इन् उपन्यासों में नारी के भीतर पल रहे अकेलेपन, आत्म-संघर्ष और आत्म-पहचान की खोज को गहराई से उद्घाटित करता है। सुषमा तथा राधिका का मानसिक चेतना केवल उसकी व्यक्तिगत स्थिति नहीं, बल्कि उस स्त्री वर्ग की सामूहिक चेतना का प्रतीक है जो बंधन से मुक्ति और पहचान की तलाश करते है। वस्तुतः सुषमा और राधिका आधुनिक शिक्षित नारी की प्रतिनिधि है, जो अपने जीवन की दिशा स्वयं तय करना चाहती है।

संदर्भ की सूची :

1. जैन, डॉ नीलम : उषा प्रियंबदा के उपन्यासों में स्त्री विमर्श ;पृष्ठ संख्या 45 ;संस्करण 2002
2. प्रियंबदा, उषा : पचपन खंभे लाल दीवारे; राजकमल प्रकाशन; पृष्ठ संख्या 3; संस्करण 2000
3. कुमार, शशि प्रभा : उषा प्रियंबदा : सृजन और संवेदना: राज कमल प्रकाशन ;पृष्ठ संख्या 112, संस्करण2006
4. प्रियंबदा, उषा : पचपन खंभे लाल दीवारे; राजकमल प्रकाशन; पृष्ठ संख्या 26 ; संस्करण 2000
5. मन्नु भण्डारी : हिन्दी साहित्य में नारी चेतना, पृष्ठ संख्या 72, संस्करण 1984
6. प्रियंबदा, उषा : पचपन खंभे लाल दीवारे; राजकमल प्रकाशन; पृष्ठ संख्या 48; संस्करण 2000
7. खेतान, डॉ प्रभा : नारी और उसका समाज; पृष्ठ संख्या 109, संस्करण

1995

8. शुक्ल, उमा : भारतीय नारी अस्मिता की पहचान; पृष्ठ संख्या 66, संस्करण 2007

9. प्रियंवदा उषा : रुकोगी नहीं राधिका, पृष्ठ संख्या 112, संस्करण 2015

संदर्भ एवं सहायक ग्रंथों की सूची :

प्रियंबदा, उषा - पचपन खंभे लाल दीवारे, राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली ,2000

प्रियंवदा, उषा - रुकोगी नहीं राधिका ,राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2015

सिंह,ममता - उषा प्रियंबदा के उपन्यासों में नारी मन का द्वंद, वाणी प्रकाशन, 2007

खेतान, डॉ प्रभा - नारी और उनका समाज :साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 1995

भण्डारी, मन्नु - हिन्दी कथा साहित्य में नारी चेतना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995

जैन, डॉ नीलम - उषा प्रियंबदा के उपन्यासों में स्त्री विमर्श; हिन्दी ग्रंथ अकादमी, मध्य प्रदेश ;संस्करण 2002

गर्ग, डॉ मृदुला - स्त्री और साहित्य ; भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली ,1998

शुक्ल, उमा :भारतीय नारी अस्मिता की पहचान ; लोकभारती प्रकाशन 2007

ISSN 2279-0683

প্রকাশ

আগষ্ট, ২০২৩

পদ্মনাথ শ্রব্য অভিধান

হিন্দী সাহিত্যৰ চর্চা



প্রকাশ

তৃতীয় পর্ব ।।
১৩৫সংখ্যক প্রকাশন ।।
শাওণ-ভাদ ১৯৪৫ শক।।
আগষ্ট, ২০২৩

পঞ্জীয়ন নং ঃ ২৯৯৮২/৭৫
ISSN 2279-0683



বিষয় সূচী

সম্পাদকীয়।। ৩ ।।

প্রবন্ধ

অসমীয়া ভাষাৰ উচ্চাৰণৰ কিছু দিশ আৰু পদ্মনাথ শ্ৰব্য অভিধানৰ ধ্বনি লিপ্যন্তৰকৰণ
ড° ভাস্কৰজ্যোতি শর্মা।। ৪।।

ভাষাৰ সংৰক্ষণ আৰু বিকাশত ভাষা-প্রযুক্তিৰ ভূমিকা
ড° গুণদীপ চেতিয়া।। ৯।।

মিলান কুন্দেৰাৰ গল্প

হিচহাইকিং খেল
অনুবাদ ঃ ব্রজেন ডেকা।। ১২।।

হিন্দী সাহিত্যৰ চর্চা

হিন্দী কবিতাৰ বিকাশ, উন্নয়ন আৰু সাম্প্রতিকতা
ড° ৰীতামণি বৈশ্য।। ২২।।

উত্তৰ-পূর্বাঞ্চলত হিন্দী সাহিত্যৰ চর্চা ঃ এক অৱলোকন
ড° সঞ্জীৱ মণ্ডল।। ৩১।।

হিন্দী গল্প সাহিত্যৰ বিকাশ
ড° মালবিকা শর্মা।। ৩৮।।

সমকালীন হিন্দী চুটিগল্প ঃ উত্তৰণৰ এক নতুন অধ্যায়
দীপজ্যোতি বৰা।। ৪০।।

সাম্প্রতিক যুগৰ হিন্দী চুটিগল্পত কিন্নৰ জীৱন
প্রিয়ংকা কলিতা।। ৪৩।।

প্রবাসী হিন্দী সাহিত্যৰ অতীত আৰু বর্তমান
উদিপ্ত তালুকদাৰ।। ৪৮।।

সাম্প্রতিক যুগৰ হিন্দী ব্যংগ সাহিত্য
প্রিয়া চাহ।। ৫৪।।

সমকালীন হিন্দী সাহিত্যৰ মহিলা ঔপন্যাসিকসকল
ড° জিনাক্ষী চুতীয়া।। ৫৮।।

অনুবাদ গল্প

প্রেমত নৌকা বিহাৰ ঃ এটি উত্তৰ আধুনিক কাহিনী
মূল ঃ জ্ঞান চতুর্বেদী
অনুবাদ ঃ পপী কলিতা।। ৫২।।

অনুবাদ কবিতা

পূর্ণ গ্রহণ
মূল ঃ অনামিকা
অনুবাদ ঃ ঋষভ বশিষ্ঠ।। ৬৫।।

নিজৰ ঘৰৰ সন্ধানত
মূল ঃ নির্মলা পুতুল
অনুবাদ ঃ মিণ্টুল হাজৰিকা।। ৬৫।।

মানুহৰ দৰে
জোতা
মূল ঃ নৰেশ সক্সেনা

মৃত্যু
পিঞ্জৰা
মূল ঃ উদয় প্রকাশ

শেষ চিঠি
এক ইঞ্চি
মূল ঃ গীত চতুর্বেদী
অনুবাদ ঃ উৎপল ডেকা।। ৬৬।।

সম্পাদক ▶ মিহিৰ দেউৰী
সহযোগী সম্পাদক ▶ গীতালি বৰা
সহকাৰী সম্পাদক ▶ অর্চনা শইকীয়া

প্রকাশক ▶ প্রমোদ কলিতা,
সচিব, অসম প্রকাশন পৰিষদ গুৱাহাটী-৭৮১০২১
মুদ্রণ ▶ অৰোৰা ফাইন আর্টছ, বামুণীমৈদাম, গুৱাহাটী-২১
মূল্য ▶ ৬০.০০ টকা মাত্র

Publisher :
Pramod Kalita,
Secretary, Publication Board Assam,
Bamunimaidam, Guwahati-21



আত্মকথা

কল্যাণ খৰমান

নগেন শইকীয়া।। ৭৮।।

আত্মজীৱনী

সপোন আৰু সংগ্রামৰ কৈশোৰ

য়েছে দৰজে ঠংচি।। ৮৩।।





গল্প

চিনাৰৰ গোন্ধ

পঙ্কজ প্রতিম বৰদলৈ।। ৭২।।

ভ্রমণ সাহিত্য

ভিয়েটনামা

অতনু ভট্টাচার্য।। ৮৭।।

কবিতা

৬৭-৭১

হৰেকৃষ্ণ ডেকা

এম. কামালুদ্দিন আহমেদ

মনোজ বৰপূজাৰী

নিবেদন দাস পাটোৱাৰী

কৌশিক বাস্যস

দিগন্ত শইকীয়া

কিশোৰ বড়ো

কংকনা ঠাকুৰীয়া

আবেদুৰ ৰহমান

ধাৰাবাহিক অনুবাদ

কেল্টিক মুনিচুনি বেলা

পৰী আৰু লোককথা

মূল ঃ উইলিয়াম্ বাট্লাৰ য়েট্ছ

অনুবাদ ঃ হিতেন শর্মা।। ৯২।।

গ্রন্থ সমালোচনা

জোনৰ বেজি বেলিৰ বটিয়া

ড° পৰী হিলৈদাৰী।। ৯৯।।

*প্রকাশ*ৰ এই সংখ্যাৰ 'হিন্দী সাহিত্যৰ চর্চা' শিতানটিৰ প্রস্তুতিত গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়ৰ হিন্দী বিভাগৰ মুৰব্বী অধ্যাপক ড° **ৰীতামণি বৈশ্যই** বিশেষ সহযোগিতা আগবঢ়াইছে।

পৰিবেশক ▶ প্রণৱজ্যোতি চহৰীয়া

ফোন-৯৮৬৪৪-০১২৪৭

ঘোষণা

*প্রকাশ*লৈ সকলো ধৰণৰ লেখা পঠিওৱাৰ ঠিকনা ঃ

সম্পাদক/ *ফোন-৯৩৬৫০৩৪৫৬৫, প্রকাশ*, অসম
প্রকাশন পৰিষদ, বামুণীমৈদাম, গুৱাহাটী-২১
email : prakash.editor21@gmail.com

অ-মনোনীত লেখা ওভতাই দিয়া নহয়। নিজৰ লগত প্রতিলিপি ৰাখিহে *প্রকাশ*লৈ লেখা পঠিয়াব।

প্রত্যেক লেখককে লেখাৰ লগত তেওঁৰ সম্পূর্ণ ডাক-ঠিকনা আৰু বেংকৰ একাউণ্ট নম্বৰ, আই এফ এছ চি কোড নম্বৰ আৰু ব্রাঞ্চৰ নাম উল্লেখ কৰিবলৈ অনুৰোধ জনোৱা হ'ল।



হিন্দী গল্প সাহিত্যৰ বিকাশ

ড° মালবিকা শর্মা

প্রেমচন্দৰ পৰৱর্তী সময়ছোৱাত আন এজন উল্লেখযোগ্য গল্পকাৰ হ'ল যশপাল। তেওঁৰ অধিকাংশ গল্প চিন্তাপ্রধান। মার্ক্সবাদৰ প্রভাৱ তেওঁৰ গল্পত দেখিবলৈ পোৱা যায় ...

বৈচিত্র্যময় জীৱনৰ শব্দময়ী প্রকাশেই হ'ল সাহিত্য। সেয়ে সাহিত্যক জীৱনৰ দাপোণ তথা প্রতিবিম্ব বুলি কোৱা হয়। সাহিত্যৰ বিভিন্ন ঠাল অথবা ভাগ আছে। অর্থাৎ মানৱ জীৱনৰ অভিব্যক্তিৰ প্রকাশৰ বিভিন্ন মাধ্যম আছে। তাৰ ভিতৰত গল্পও এটি মাধ্যম আৰু সাহিত্যৰ এটি শক্তিশালী ধাৰা। ইয়াৰ পৰম্পৰা অতীজৰে পৰা ভাৰতীয় তথা বিশ্বসাহিত্যত প্রচলন হৈ আছে। কিয়নো সাধু কোৱা অথবা সাধু শুনা মানুহৰ সহজাত প্রবৃত্তি। সেয়ে ভাৰতীয় সাহিত্যত গল্প সাহিত্যৰ ইতিহাস বহু পুৰণি। বৈদিক যুগৰ পৰাই ভাৰতীয় সাহিত্যত গল্পৰ পৰম্পৰা চলি আহিছে। বিভিন্ন *পুৰাণ, ৰামায়ণ, মহাভাৰত, পঞ্চতন্ত্র, জাতক* আদিৰ গল্পবোৰে তাৰেই স্বাক্ষৰ বহন কৰিছে।

ভাৰতীয় সাহিত্যৰ অন্যতম সাহিত্য হিন্দী সাহিত্য গল্প সাহিত্যৰ ক্ষেত্রত অতি চহকী। আধুনিক হিন্দী গল্প সাহিত্যৰো এটি সুদীর্ঘ পৰম্পৰা আছে। কিন্তু বাস্তৱিক অর্থত আধুনিক হিন্দী গল্পৰ বিকাশ দ্বিবেদী যুগ অর্থাৎ ইং ১৯০০ চনৰ পৰা নিৰন্তৰ গতিত প্রবাহমান হৈ আছে। ভাৰতেন্দু হৰিশ্চন্দ্রক আধুনিক হিন্দী সাহিত্যৰ পিতা বুলি কোৱা হয় আৰু তেওঁৰ নামেৰে অভিহিত কৰা ভাৰতেন্দু যুগত আধুনিক হিন্দী সাহিত্যৰ বিভিন্ন ঠালৰ বিকাশ হয়। কিন্তু অধ্যয়নৰ পৰা দেখা গৈছে যে ভাৰতেন্দু যুগত মৌলিক গল্পৰ ৰচনা হোৱা নাছিল। সেয়ে আধুনিক হিন্দী সাহিত্যৰ উদয় দ্বিবেদী যুগত মহাবীৰ প্রসাদ দ্বিবেদীৰ দ্বাৰা সম্পাদিত *সৰস্বতী* নামৰ আলোচনীখনৰ প্রকাশৰ লগে লগে স্বীকাৰ কৰা হয়। [১]

আধুনিক হিন্দী গল্পৰ জগতখনৰ এটি উজ্জ্বল নক্ষত্র হ'ল মুঞ্চী প্রেমচন্দ। প্রেমচন্দৰ নেতৃত্বত হিন্দী গল্পই এটি নতুন যুগৰ সূচনা কৰে। সেয়ে প্রেমচন্দক আধাৰ হিচাপে লৈ বিশিষ্ট গৱেষকসকলে আধুনিক হিন্দী গল্প সাহিত্যক কেইবাটাও ভাগত ভাগ কৰে—

১। পূর্ব-প্রেমচন্দ যুগ অথবা প্রাক্ প্রেমচন্দ যুগ।
২। প্রেমচন্দ যুগ।
৩। প্রেমচন্দোত্তৰ যুগ।

১। প্রাক্ প্রেমচন্দ যুগ ঃ দ্বিবেদী যুগৰ পূর্বতেও বহু গল্পকাৰে গল্প ৰচনা কৰিছিল। তেওঁলোকৰ ভিতৰত ইঞ্চা আল্লাখাৰ 'ৰাণী কেতকী-কী কহানী, লল্লুলালৰ 'সিংহাসন বত্তসী', বেতাল পচিসী আৰু প্রেমসাগৰ, সদল মিশ্রৰ 'নসিকেতোপখ্যান' ইত্যাদি উল্লেখযোগ্য গল্প। কিন্তু এই গল্পসমূহত আধুনিক গল্পৰ বৈশিষ্ট্যসমূহ পৰিলক্ষিত হোৱা নাছিল। ১৯০০ চনত *সৰস্বতী* আলোচনী প্রকাশ হয়। সম্পাদনাৰ দায়িত্ব মহাবীৰ প্রসাদ দ্বিবেদীয়ে গ্রহণ কৰে। লগে লগে দ্বিবেদীৰ নেতৃত্বত অনেক গল্পকাৰে *সৰস্বতী* আলোচনীত গল্প লিখিবলৈ আৰম্ভ কৰে আৰু সঁচা অর্থত আধুনিক হিন্দী গল্পৰ বিকাশৰ জয়যাত্রা আৰম্ভ হয়। ১৯০০ চনত কিশোৰী লাল গোস্বামীৰ 'ইন্দুমতী' নামৰ গল্প এটি প্রকাশ হয়। বহু সমালোচকে 'ইন্দুমতী'ক হিন্দী সাহিত্যৰ প্রথম মৌলিক গল্পৰ মান্যতা দিয়ে। কিন্তু আন বহু সমালোচকে এই গল্পটোত শ্বেইক্সপীয়েৰৰ 'টেম্পেষ্ট' নাটকৰ সম্পূর্ণ প্রভাৱ পৰা বুলি কয়।[২] বহুতে আকৌ বংগ মহিলাৰ 'দুলাইবালী (১৯০৭ চন) গল্পটোক হিন্দীৰ প্রথম মৌলিক গল্প বুলি অভিহিত কৰে। কিন্তু অনুবাদ গল্প বুলি ইয়াকো অস্বীকাৰ কৰা হয়। এই সময়ৰ প্রসিদ্ধ গল্পকাৰ চন্দ্রধৰ শর্মাৰ গুলেৰীয়ে ১৯১৫ চনত 'উসনে কহা থা' শীর্ষক এটি গল্প *সৰস্বতী* আলোচনীত প্রকাশ কৰে। প্রথম বিশ্বযুদ্ধৰ আধাৰত ৰচিত এই গল্পটোকে হিন্দী সাহিত্যৰ প্রথম মৌলিক গল্প বুলি স্বীকাৰ কৰা হয়। পণ্ডিত ৰামচন্দ্র শুক্লই 'উসনে কহা থা' শীর্ষক গল্পটিৰ পৰাই আধুনিক হিন্দী গল্পৰ আৰম্ভণি হোৱা বুলি ব্যক্ত কৰে। [৩]

এই সময়ছোৱাত জাসুসী (চোৰাংচোৰা) সম্পর্কীয় গল্পৰো ৰচনা কৰা হয়। এই গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত গোপাল ৰাম গহমৰীৰ নাম উল্লেখযোগ্য। তেওঁৰ 'ত্রিবেণী', 'সুভদ্রা', 'চতুৰ চঞ্চলা তথা ডাকু কী পহনাই' আদি লেখত ল'ৰলগীয়া গল্প। ইয়াৰ উপৰি ৰামচন্দ্র শুক্লৰ 'গ্যাৰহ বর্ষ কা সময়' (১৯০৩), গিৰিজা দত্ত বাজপেয়ীৰ 'পণ্ডিত আৰু পণ্ডিতানী' (১৯০৩), বৃন্দাবন লাল বর্মাৰ 'ৰাখী বন্দ ভাই (১৯০৯), মৈথিলীশৰণ গুপ্তৰ 'নকলী কিলা' (১৯০৯), জয়শঙ্কৰ প্রসাদৰ 'গ্রাম' (১৯১১), বিশ্বম্ভৰ নাথ শর্মা 'কৌশিক'ৰ 'ৰক্ষাবন্ধন' আদি প্রসিদ্ধ গল্প ৰচিত হয়।

এই সময়ছোৱাৰে আনজন প্রসিদ্ধ গল্পকাৰ হৈছে জয়শঙ্কৰ প্রসাদ। ইতিহাস প্রসিদ্ধ আৰু ভাবমূলক বিষয়-বস্তু জয়শঙ্কৰ প্রসাদৰ ৰচনাৰ বৈশিষ্ট্য। স্বর্ণিম অতীতৰ গৌৰৱময়ী বিষয়-বস্তুক মূল হিচাপে লৈ তেওঁৰ গল্প বিকশিত হয়। তেওঁৰ গল্প সংগ্রহসমূহ হ'ল— *ছায়া* (১৯১২), *প্রতিধ্বনি* (১৯৩১), *আকাশ দীপ*

(১৯২৮), *আঁধী*(১৯৩১) *তথা ইন্দ্রজাল*(১৯৩৬) আদি। প্রসাদৰ গল্পত চিত্রিত নাৰী চৰিত্রৰ ভিতৰত 'আকাশ দীপ'ৰ 'চম্পা', 'দেৱৰথ'ৰ 'সুমাতা' তথা 'পুৰস্কাৰ'ৰ 'মধুলিকা'ৰ মাজেদি লেখকে নিয়তি আৰু সমাজৰ লগত সংঘর্ষ কৰা নাৰীক পাঠক সমাজৰ আগত দাঙি ধৰিবলৈ প্রয়াস কৰে।

প্রেমচন্দৰ অনুগামী লেখকসকলৰ ভিতৰত বিশম্ভৰ নাথ



যশপাল



প্রেমচন্দ

শর্মা 'কৌশিক' আৰু বদ্রীনাথ ভট্ট 'সুদর্শন'ৰ নাম অন্যতম। কৌশিকৰ 'তাঈ' আৰু 'পগলী' তথা সুদর্শনৰ 'হাৰ কী জীত', 'কবি কী স্ত্রী' আদি গল্পত সামাজিক সমস্যা, মনোবৈজ্ঞানিক চিত্রণ দেখিবলৈ পোৱা যায়।

২। **প্রেমচন্দ যুগ ঃ**

আধুনিক হিন্দী গল্পৰ বিকাশত প্রেমচন্দৰ বিশেষ অৱদান আছে। প্রেমচন্দ যুগৰ গল্পবোৰৰ সময়োপযোগী বিষয়-বস্তু আৰু ভাষা-শৈলীৰ প্রৌঢ়তাৰ কাৰণে এই সময়ছোৱাক আধুনিক হিন্দী গল্পৰ সোণালী যুগ বুলি কোৱা হয়। প্রেমচন্দে প্রথমবাৰৰৰ বাবে হিন্দী গল্পৰ বিষয়-বস্তুক বাস্তৱতা প্রদান কৰে। সাধাৰণ জনতাৰ সুখ-দুখ, হাহি-কান্দোন তথা সময়সাময়িক সমাজ জীৱনৰ বাস্তৱৰ ছবি গল্পত প্রকাশ কৰি প্রেমচন্দে হিন্দী গল্প-সাহিত্যত এটি নতুন যুগৰ সূচনা কৰে। প্রেমচন্দৰ গল্পসমূহত স্বাধীনতা আন্দোলন, হৰিজন উদ্ধাৰ আন্দোলন, নাৰী স্বাধীনতা, নাৰীৰ মনোবৈজ্ঞানিক চিত্রণ আদি দেখিবলৈ পোৱা যায়। উদাহৰণ স্বৰূপে 'পঞ্চ পৰমেশ্বৰ', 'বুঢ়ী কাকী', 'পূস কী ৰাত', 'শতৰঞ্জ-কে খিলাড়ী', 'দো বৈলোঁ কী কথা', 'ঈদগাহ' আৰু 'কফন' আদি নিঃসন্দেহে অতি উৎকৃষ্ট মানৰ গল্প। এই যুগৰ অন্য গল্পকাৰৰ ভিতৰত পাণ্ডেয় বেচন শর্মা উগ্র, পদুমলাল পুন্নালাল বক্সী, সুর্যকান্ত ত্রিপাঠী নিৰালা, ভবানী প্রসাদ বাজপেয়ী, চণ্ডী প্রসাদ হৃদয়েশ, বিনোদ শঙ্কৰ ব্যাস, ৰামকৃষ্ণ দাস আদিৰ মুখ্য গল্পকাৰৰ অৱদান উল্লেখযোগ্য। পাণ্ডেয় বেচন শর্মা উগ্রৰ গল্পত যদিও আদর্শবাদী ভাবধাৰা পৰিলক্ষিত হয়, কিন্তু কিছুমান গল্পত সমাজৰ নগ্ন ছবিখনো চিত্রিত হয়। উদাহৰণ স্বৰূপে 'চিনগাৰিয়াঁ' গল্পটিত চিত্রিত বিদ্রোহপূর্ণ ৰাষ্ট্রীয় চেতনাৰ পয়োভৰ আছিল। সেই সময়ৰ ইংৰাজী চৰকাৰে গল্প সংগ্রহখন জব্দ কৰি কয়।

৩। **প্রেমচন্দোত্তৰ যুগ ঃ**

প্রেমচন্দৰ পাছত হিন্দী গল্পক নতুন দিশলৈ লৈ যোৱা গল্পকাৰৰ ভিতৰত জৈনেন্দ্রৰ নাম ল'ব লাগিব। যদিও প্রেমচন্দৰ লগত তেওঁৰ ঘনিষ্ঠ সম্বন্ধ আছিল, তথাপি তেওঁ প্রেমচন্দৰ ধাৰাক অনুসৰণ নকৰি গল্পক চৰিত্রৰ মনোবৈজ্ঞানিক দিশ বিশ্লেষণ কৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছিল। ড° নগেন্দ্রই তেওঁৰ *হিন্দী সাহিত্যৰ ইতিহাস* নামৰ কিতাপত জৈনেন্দ্রৰ বিষয়ে এনেদৰে কয় যে 'জৈনেন্দ্র নে কথাবস্তু কো সামাজিক ধৰাতল সে সমেট কৰ ব্যক্তিগত ঔৰ মনোবৈজ্ঞানিক ভূমিকা পৰ প্রতিষ্ঠিত কিয়া।'[৪] তেওঁৰ 'হত্যা' শীর্ষক গল্পটি ইয়াৰ উৎকৃষ্ট উদাহৰণ। জৈনেন্দ্রৰ নাৰী চৰিত্র অতি শক্তিশালী। তেওঁৰ গল্পৰ নায়িকাই মুক্তিৰ উশাহ ল'ব বিচাৰে। নিজৰ অস্তিত্ব বিচাৰিব জানে। জৈনেন্দ্রৰ দৰে মনস্তত্ত্বক মুখ্য বিষয় হিচাপে লৈ লিখা গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত অজ্ঞেয় উল্লেখযোগ্য গল্পকাৰ। অজ্ঞেয়ৰ গল্পৰ চৰিত্র বহুমুখী। সেই সময়ৰ ভাৰতীয় সমাজৰ শোষণ, বিদ্রোহী নাৰী চৰিত্র, আধুনিক বিশ্বযুদ্ধৰ কাৰণ আদিৰ বিশ্লেষণ তেওঁৰ গল্পৰ বৈশিষ্ট্য। উদাহৰণ স্বৰূপে 'ত্রিপথগা', 'পৰম্পৰা', 'জয়দৌল', 'শৰণার্থী' আদি।

প্রেমচন্দৰ পৰৱর্তী সময়ছোৱাত আন এজন উল্লেখযোগ্য গল্পকাৰ হ'ল যশপাল। তেওঁৰ অধিকাংশ গল্প চিন্তাপ্রধান। মার্ক্সবাদৰ প্রভাৱ তেওঁৰ গল্পত দেখিবলৈ পোৱা যায়।

স্বাধীনতাৰ পাছত হিন্দী গল্পৰ বিকাশ যাত্রাই ন ন পথ অন্বেষণ কৰে। স্বাধীনতাৰ পাছৰ গল্পসমূহক 'নয়ী কহানী', 'সচেতন কহানী', 'অকহানী', 'সমান্তৰ কহানী', 'সাঠোত্তৰী কহানী' আদি বিভিন্ন নামেৰে অভিহিত কৰা হয় যদিও ৬০ৰ দশকৰ পাছৰ গল্পক সমকালীন অথবা সাম্প্রতিক গল্প হিচাপে কোৱা হয়। স্বাধীনতাৰ পাছৰ সময়ছোৱাত ভাৰতীয় জনসমাজ বিভিন্ন পৰিস্থিতিৰ সৈতে মুখামুখি হয়। দেশ বিভাজন, স্বাধীনতাৰ স্বপ্ন ভংগ, সাম্প্রদায়িক সংঘর্ষ, বর্ণভেদ, জাতিভেদ আদি বিভিন্ন সমস্যাৰে জর্জৰিত জনগণৰ চিন্তাধাৰাক অভিব্যক্ত কৰাই এই সময়ৰ গল্পসমূহৰ বৈশিষ্ট্য। 'নয়ী কহানী' ধাৰাৰ গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত মোহন বর্মা, কমলেশ্বৰ, ফণীশ্বৰ নাথ ৰেণু, মার্কেণ্ডেয়, ৰঘুবীৰ সহায়, মন্নু ভাণ্ডাৰী, কৃষ্ণ সোবতী, ৰাংগেয় ৰাঘব, উষা প্রিয়ম্বদা, সুধা আৰোড়া, সূর্যবালা আদি বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। শিব কুমাৰ শর্মাৰ মতে এই সময়ৰ গল্পকাৰসকল ভাৰতবর্ষত থাকিও যেন পাশ্চাত্য প্রভাৱেৰে বিশেষভাৱে প্রভাৱিত।

'সচেতন কহানী' আন্দোলনৰ প্রৱর্তক আছিল ড° মহীপ সিং। ইং ১৯৬৪ চনত প্রকাশিত *আধাৰ* নামৰ আলোচনীখন প্রকাশ হয় আৰু তেতিয়াৰ পৰাই এই আন্দোলনৰ আৰম্ভণি বুলি কোৱা হয়।

সাৰিকা আলোচনীৰ সম্পাদক কমলেশ্বৰে ১৯৭২ চনৰ আশে-পাশে 'সমান্তৰ কহানী' আন্দোলন আৰম্ভ কৰে। ঠিক তেনেকৈ 'জনবাদী কহানী'ৰ আন্দোলনো আৰম্ভ হয়।

মুঠৰ ওপৰত ১৯৬০ চনৰ পাছতেই গল্প-সাহিত্যৰ যি নতুন ধাৰাৰ বিকাশ হয় সেই সাহিত্যকেই সমকালীন হিন্দী গল্পৰ বিকাশ অথবা সাম্প্রতিক হিন্দী গল্পৰ বিকাশ বুলি অভিহিত কৰা হয়। এই

সমকালীন হিন্দী চুটিগল্প ঃ উত্তৰণৰ এক নতুন অধ্যায়

দীপজ্যোতি বৰা

'Who was the first storyteller? A lonely hunter consoling his fellows on a cold northern evening far from home? A mother calming a frightened child with tale of gods and demigods? A lover telling his intended of fantastic exploits, designed to foster his courtship?'
(*Essentials of the Theory of Fiction*)

পৃথিৱীৰ প্ৰথম গল্পটো কোনে কাক কৈছিল? সেই কথা আমি নাজানো। যদিও আজি আমি দেখা 'চুটিগল্প' সাহিত্য ইতিহাসৰ এক অৰ্বাচীন শাখা; এই কথা কোনেও অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰে যে মানুহৰ লিপি আৱিষ্কাৰৰ বহু আগৰে পৰা কাহিনীকথনৰ পৰম্পৰা চলি আহিছে। মাথোঁ সেই কাহিনীয়ে লোককথা, পু�ৰাকথা, বীৰগাথা, আখ্যান-উপাখ্যান আদিৰ মাজেদি আহি বৰ্তমানৰ লিপিবদ্ধ ৰূপ পাবলৈহে যথেষ্ট সময় লাগিল। ভাৰতীয় প্ৰেক্ষাপটত চাবলৈ গ'লে চুটিগল্পৰ উদ্ভৱ আৰু বিকাশত কাকত-আলোচনীসমূহে মুখ্য ভূমিকা গ্ৰহণ কৰা দেখা যায়।

ছপা মাধ্যমৰ প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰৰ লগে লগে বাংলা, অসমীয়া, মাৰাঠী আদি প্ৰাদেশিক ভাৰতীয় ভাষাসমূহৰ দৰেই হিন্দী ভাষাতো কাকত-আলোচনী প্ৰকাশ হ'বলৈ ধৰে— যিসমূহ কাকত-আলোচনীয়ে দেশ-বিদেশৰ বাৰ্তা আৰু জ্ঞান-বিজ্ঞানৰ তথ্য প্ৰদান কৰাৰ লগতে সাহিত্য শিল্পৰ নতুন নতুন ধাৰাকো পাঠক সমাজৰ পৰিচয় কৰাই দিছিল। ভাৰতীয় সাহিত্যৰ প্ৰেক্ষাপটত 'চুটিগল্প' তেনে এটাই সাহিত্য-ধাৰা; যাৰ সৃষ্টি কবিতা, নাটক আদিৰ তুলনাত বহু পলমকৈ হ'লেও সাম্প্ৰতিক এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ধাৰা হিচাপে চৰ্চিত আৰু জনপ্ৰিয় হৈছে। বিংশ শতিকাৰ আৰম্ভণিত প্ৰথম ভুমুকি মৰা হিন্দী চুটিগল্পই প্ৰায় এশ বিছ বছৰৰ বৰ্ণিল যাত্ৰা অতিক্ৰম কৰি বৰ্তমান অৱস্থাত উপনীত হৈছে।

একোটা ঘটনা, কাহিনী বা চৰিত্ৰৰ মাধ্যমেৰে নিৰ্দিষ্ট আদৰ্শত উপনীত হোৱাই প্ৰাৰম্ভিক হিন্দী গল্পলেখকসকলৰ উদ্দেশ্য আছিল। আনকি সামাজিক সমস্যা আৰু জীৱনৰ বাস্তৱতা প্ৰকাশ পালেও প্ৰেমচন্দৰ গল্পসমূহতো পাৰিবাৰিক আৰু সামাজিক বাস্তৱতাৰ মাজৰ এটা বিন্দুত অৱস্থান গ্ৰহণ কৰা পৰিলক্ষিত হয়। অৱশ্যে 'কফন', 'পুষ কি ৰাত' আদি গল্পত আদৰ্শবাদৰ পৰা ফালৰি কাটি যথাৰ্থ বাস্তৱবাদী দৃষ্টিভংগী গ্ৰহণৰ প্ৰচেষ্টাও প্ৰেমচন্দৰ চুটিগল্পৰ লক্ষ্যণীয় দিশ— যি পৰৱৰ্তী গল্পকাসকলৰ বাবে জীৱন সম্পৰ্কীয় সূক্ষ্মদৃষ্টি গঠনৰ আধাৰ হিচাপে পৰিগণিত হৈছে।

কিন্তু স্বাধীনতাৰ পৰৱৰ্তী সময়ত গল্পকাৰসকলৰ সমুখত এখন সম্পূৰ্ণ নতুন জগত মুকলি হ'ল। গল্পকাৰসকলে খুব সোনকালে উপলব্ধি কৰিছিল যে স্বাধীনতাই কেৱল শতিকাৰ দাসত্বৰ পৰাই মুক্তি দিয়া নাই, আৰ্থিক আৰু নৈতিক মূল্যবোধৰ অৱক্ষয় ঘটাই মানুহৰ জীৱনপ্ৰণালী, বিশেষকৈ মধ্যবৰ্গীয় জীৱনধাৰাকো ভাঙি চুৰমাৰ কৰিলে। সেয়েহে ব্যক্তি, সমাজ, ৰাষ্ট্ৰ— এই তিনি পৰ্যায়ত নতুন ভঙা-গঢ়া সম্বন্ধ, অৱধাৰণা, মান্যতা, পৰিস্থিতি আৰু চিন্তাদৰ্শৰ মাজত দোলায়িত মানৱ প্ৰতিমাক সৃজনাত্মক আগ্ৰহেৰে গল্পকাৰসকলে গ্ৰহণ কৰিছিল। উত্তৰ-স্বাধীনতাকালত ৰচিত এই চুটিগল্পসমূহক সমালোচকসকলে— আঞ্চলিক চুটিগল্পৰ ধাৰা (ফণীশ্বৰনাথ ৰেণু), গ্ৰাম্য জীৱনভিত্তিক গল্পৰ ধাৰা (মার্কণ্ডেয়, কাশীনাথ সিংহ, শিৱপ্ৰসাদ সিংহ, লক্ষ্মীনাৰায়ণ লাল, ভৈৰৱপ্ৰসাদ গুপ্ত, শৈলেশ মটিয়াৰী, মধুকৰ গংগাধৰ), গল্পধাৰাৰ নেতৃত্ব দিছিল ড° গংগা প্ৰসাদ বিমলে। দৰাচলতে ১৯৬০ ৰ পাছত স্ত্ৰী আন্দোলন, নক্সাল আন্দোলন, ১৯৯০ ৰ পাছত আৰ্থিক উদাৰীকৰণ, ভূমণ্ডলীকৰণ, ২০১৯ ৰ ক'ভিডকালীন পৰিস্থিতি আদি সকলো দিশকেই সামৰি সমকালীন গল্পকাৰসকলে গল্পৰ সৃষ্টি কৰিছে।

এই গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত উল্লেখযোগ্য গল্পকাৰ হ'ল— দুধনাথ সিং, কাশীনাথ সিং, উদয় প্ৰকাশ, ওম প্ৰকাশ বাল্মীকি, হৰি ভটনাগৰ আদি।

এই দৰে ঊনবিংশ শতিকাৰ অন্তিম সময়ৰ পৰা আজিলৈকে আধুনিক হিন্দী গল্প-সাহিত্যৰ বিকাশ নিৰবচ্ছিন্নভাৱে সময় তথা পৰিস্থিতি সাপেক্ষে পৰিৱৰ্তিত ধাৰাত প্ৰবাহমান হৈ আছে। এই বিকাশ যাত্ৰাত আদৰ্শবাদ, যথাৰ্থবাদ, সমাজবাদ, স্বাধীনতা আন্দোলনৰ প্ৰত্যক্ষ বা পৰোক্ষ প্ৰভাৱ, বিশ্বযুদ্ধ, নাৰী স্বাধীনতা, শোষণ, বৰ্ণবাদ, বৰ্গবাদ, সাম্প্ৰদায়িকতাবাদ, ভূমণ্ডলীকৰণ আদিৰ অৱদান দেখিবলৈ পোৱা যায়। মুঠৰ ওপৰত আধুনিক হিন্দী গল্পই এটি বলিষ্ঠ সাহিত্যিক ধাৰা হিচাপে হিন্দী সাহিত্যক সমৃদ্ধ কৰিছে। ▶▶

প্ৰসংগ সূত্ৰ ঃ

১। ড° নগেন্দ্ৰ ২০০৮, ৫০১
২। ড° নগেন্দ্ৰ ২০০৮, ৫০১
৩। ড° নগেন্দ্ৰ ২০০৮, ৫০১
৪। ড° নগেন্দ্ৰ ২০০৮, ৫৬৭

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

নগেন্দ্ৰ. হিন্দী সাহিত্য কা ইতিহাস. নেশ্যনল পাব্লিচিং হাওস ঃ দিল্লী, ২০০৪

ৰাহুল ভৰদ্বাজ. *নয়ে দশক কী হিন্দী কহানী মেঁ মূল্য ৱিঘটন.* জৱাহৰ পুস্তকালয় ঃ মথুৰা, ১৯৯৯

শুক্ল, ৰামচন্দ্ৰ. *হিন্দী সাহিত্য কা ইতিহাস.* নাগৰী প্ৰচাৰিণী সভা ঃ কাশী, ১৯৪১

সিং, প্ৰ. বাসুদেৱ. *হিন্দী সাহিত্য কা সমীক্ষাত্মক ইতিহাস.* সঞ্জয় বুক সেণ্টৰ, ১৯৯৭

ফোন ঃ ৯৪৩৫৫-৫১০৭৩

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के नवीन दिशा-निर्देश के अनुरूप

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED
& REFEREED JOURNAL

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 74 अंक : 12

मार्च, 2025



अमृत वर्ष
की ओर
अग्रसर ...

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
www.arpsguwahati.com

वर्ष : 74 अंक : 12 मार्च, 2025

परामर्श मंडल

भारतभूषण महंत (असम) • **प्रो. आर. एस. सर्राजु** (तेलंगाना) • **प्रो. किरण हाजरिका** (पंजाब)
• **प्रो. प्रदीप के शर्मा** (सिक्किम) • **प्रो. एच. एन. वाघेला** (गुजरात) • **डॉ. रीतामणि वैश्य** (असम)

संपादक मंडल

प्रो. देवाशीष महापात्र (तेजपुर) • **डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन** (गुवाहाटी) • **प्रो. दिलीप कुमार मेधी** (गुवाहाटी)
• **डॉ. अनुशब्द** (तेजपुर) • **डॉ. कुसुम कुंज मालाकार** (गुवाहाटी) • **डॉ. जुरी दत्त** (तेजपुर)
• **डॉ. अंबेश्वर गोगोई** (गुवाहाटी) • **डॉ. प्रांजल शर्मा वशिष्ठ** (गुवाहाटी) • **डॉ. स्वप्नाली दास** (गुवाहाटी)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया

संपादक

प्रो. मोहन

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature, Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32

फोन : 9101541395, 9101541380

ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा. लिमिटेड, इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

© सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

ISSN 2321-4945
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

राष्ट्रबोध

असमीया कविता में राष्ट्रीय चेतना

स्वाधीनता आंदोलन के विशेष संदर्भ में



डॉ. मालबिका शर्मा

सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग
राधा गोविंद बरुवा महाविद्यालय
गुवाहाटी-781025
9435551073
malabika.sarma123@gmail.com

शोध-सार :

भारत की अन्य भाषाओं की तरह असमीया भाषा की कविताओं की भी एक विशिष्ट पहचान है। असमीया कविता प्राचीन काल से ही समृद्ध है व इसकी अपनी एक अच्छी विरासत है। ग्रामीण गीत-कविता के सहज, सरल आनुभूतिक कमनीयता प्रारंभिक स्तर की कविताओं में उपलब्ध है। शंकर-पूर्व युग के कवि माधव कंदली और पीतांबर, मनकर, दुर्गावर इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। माधव कंदली की कविताओं में जहाँ छंदोवद्ध वर्णन का सौंदर्य पाया जाता है, वहीं पीतांबर, दुर्गावर, मनकर की कविताओं में सरल गीत की प्रचुरता देखने को मिलती है। शंकर युग के प्रमुख कवि श्रीमंत शंकरदेव की कविताओं में सात्विक गांभीर्य तथा माधवदेव की कविताओं में प्राचीन विरासत की मौलिकता और काव्य सौष्ठव दिखाई देते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में असमीया कविता नई अनुभूतियों से सजीव होकर अभिव्यक्त हुई है। वास्तव में असमीया कविता का विकास एक विचित्र प्रकार की दिशा और दशा तथा परिवर्तन का इतिहास है।

जैसा की साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है, अत: तत्कालीन समाज को उस समय के साहित्य में देखा जा सकता है। कवि न समाज की उपेक्षा कर सकता है और न ही अपने युग की। वस्तुत: कवि समसामयिकता से संबद्ध रहता है। 19वीं शती के उत्तरार्द्ध से प्रारंभ हुए स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव असमीया साहित्य पर भी पड़ने लगा।

स्वाधीनता आंदोलन भारतीय इतिहास की एक ऐतिहासिक घटना है। इस आंदोलन में भारत के अन्य राज्यों के साथ-साथ असम ने भी भरपूर योगदान दिया था। परिणामस्वरूप तत्कालीन समय की कविताओं में स्वाधीनता आंदोलन का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव देखा जाता है।

असमीया साहित्य-जगत में राष्ट्रीय चेतना एक उल्लेखनीय पक्ष है, जो प्राचीन काल से पारंपरिक रूप से चली आ रही है और इसका चरम निदर्शन हम आधुनिक असमीया कविता में देख सकते हैं।

जोनाकी-युग की कवियों ने देश के प्रति असीम प्रेम अभिव्यक्त करने के साथ-साथ देश और समाज की दुर्दशा का चित्र भी उकेरा है। इसके साथ ही देश के

गौरवशाली अतीत का भी गुणगान किया है। इतना ही नहीं, इन कवियों ने कविताओं के माध्यम से एक शक्तिशाली, सुंदर और स्वस्थ मातृभूमि की प्रतिष्ठा का स्वप्न भी देखा है।

वास्तव में पराधीनता के समय में मानव के हृदय में सुप्त देशप्रेम जागृत करने वाले असमीया कवियों में उल्लेखनीय हैं- लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा, अंबिकागिरी रायचौधुरी, ज्योतिप्रसाद आगरवाला, विष्णुप्रसाद राभा, नलिनीबाला देवी आदि। इन कवियों के ओजस्वी राष्ट्रीय गीत और कविता ने सभी जाति, धर्म, वर्ण के लोगों को जागृत किया। उक्त प्रमुख कवियों का अनुसरण करते हुए राज्य के कई देशप्रेमी लोगों ने भी स्वाधीनता से संबंधित गीत, कविताओं की रचना की, जो आम जनता के बीच बहुत लोकप्रिय बने।

वस्तुत: साहित्य में गीत, कविता एक ऐसी विधा है, जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। अत: कहा जा सकता है कि स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने में इन गीत, कविताओं ने मुख्य भूमिका अदा की थी।

बीज शब्द :

राष्ट्रीय चेतना, असमीया साहित्य, कविता, स्वाधीनता आंदोलन, देशप्रेम।

प्रस्तावना :

भारत की अन्य भाषाओं की तरह असमीया भाषा की कविताओं की भी एक विशिष्ट पहचान है। असमीया कविता प्राचीन काल से ही समृद्ध है व इसकी अपनी एक अच्छी विरासत है। ग्रामीण गीत-कविता के सहज, सरल आनुभूतिक कमनीयता प्रारंभिक स्तर की कविताओं में उपलब्ध है। शंकर-पूर्व युग के कवि माधव कंदली और पीतांबर, मनकर, दुर्गावर इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। माधव कंदली की कविताओं में जहाँ छंदोवद्ध वर्णन का सौंदर्य पाया जाता है, वहीं पीतांबर, दुर्गावर, मनकर की कविताओं में सरल गीत की प्रचुरता देखने को मिलती है। शंकर युग के प्रमुख कवि श्रीमंत शंकरदेव की कविताओं में सात्विक प्राणमय गांभीर्य तथा माधवदेव की कविताओं में हृदयस्पर्शी निर्मल करुणा के दर्शन होते हैं। इस प्रकार ऊपर उल्लेखित कवियों की कविताओं प्राचीन विरासत की मौलिकता और काव्य सौष्ठव दिखाई देते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य से प्रभावित असमीया कविता नई अनुभूतियों से सजीव होकर अभिव्यक्त हुई है। फलस्वरूप भावना जगत में परिवर्तन, विस्तार और क्रांति परिलक्षित हुई है। वैयक्तिक अनुभूति के माध्यम से बहिर्जगत का चित्रण और राष्ट्रीय चेतना तथा स्वदेश प्रेम के गीत और कविता रचे जाने लगे। युग चेतना के मार्गदर्शक जोनाकी युग की 'त्रिमूर्ति' चंद्रकुमार आगरवाला, लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा, हेमचंद्र गोस्वामी के उदय ने असमीया साहित्य में संजीवनी शक्ति ही प्रदान नहीं किया; अपितु समग्र भाव जगत में एक नवीन स्पंदन ला दिया और एक नवीन चेतना का संचार किया। इससे पहले भी देशप्रेम के उद्घोषक के रूप में आनंदराम ढेकियाल फूकन, हेमचंद्र बरुवा तथा गुनाभिराम बरुवा ने सशक्त रूप में असमीया भाषा को विविध साहित्य रूपों में स्थापित किया। पाश्चात्य साहित्य और बांग्ला साहित्य के प्रभाव से प्रभावित असमीया रोमांटिक युग की काव्य धारा के विविध विषय में पराधीनता का विषाद और राष्ट्रीय चेतना भी पूर्ण रूप से अभिव्यक्त हुई है।

विषय का उद्देश्य :

राष्ट्रीय चेतना से तात्पर्य है - राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा, राष्ट्र का गौरव-गान तथा राष्ट्र के प्रति उस देश के नागरिकों की समग्र सोच और अनुभूति। स्वाधीनता आंदोलन भारतवर्ष की अस्मिता की खोज है। इस आंदोलन में भारत के अन्य राज्यों के साथ-साथ असम ने भी भरपूर योगदान दिया था। जैसा की साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है, इसीलिए कवि न समाज की उपेक्षा कर सकता है और न अपने युग की। कवि समसामयिकता से संबद्ध रहता है। अत: 19वीं शदी के उत्तरार्द्ध से प्रारंभ हुए स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव, पराधीनता के प्रति क्षोभ का भाव तथा अंग्रेजी शासन के प्रति विद्रोह एवं क्रांति के स्वर असमीया कविता में प्रस्फुटित होना नितांत स्वाभाविक है। स्वाधीन देश के हर स्वाधीन नागरिक को अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का अधिकार होता है। इसीलिए साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का अध्ययन सामाजिक



जीवन में प्राण-तत्व की भूमिका निभाता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत विषय का चयन किया गया। परंतु यह विषय इतना व्यापक है कि इसे एक शोध पत्र में समेट लेना संभव नहीं है। अत: इस क्षेत्र में प्रवेश करने की दृष्टि मात्र से प्रस्तुत शोध पत्र का चयन किया गया है।

विषय का महत्व :

असमीया साहित्य जगत में राष्ट्रीय चेतना एक उल्लेखनीय पक्ष है, जो प्राचीन काल से पारंपरिक रूप से चली आ रही है और जिसका चरम निदर्शन आधुनिक असमीया कविता में परिलक्षित होता है। राष्ट्रीय चेतना तथा देशप्रेम की कविताओं में विशेषत: दो उल्लेखनीय तत्व पाए जाते हैं- विद्रोह और आत्मा। चूँकि कवियों के मर्मस्पर्शी हृदय में जिस प्रकार देश के प्रति असीम प्रेम है, उसी प्रकार देश की दुर्दशा के लिए क्षोभ भी है। डॉ. सत्येन शर्मा ने अपने 'असमीया साहित्यर समीक्षात्मक इतिवृत्त' नामक ग्रंथ में इस संबंध में इस प्रकार कहा है - 'अतीतर जय गान, पराधीनतार ग्लानि-अवसाद, जातीय ऐक्यर कारणे उदात्त आह्वान, आन कथात कबितात स्वदेश प्रीतिर प्रवाह बेजबरुवाते आरंभ हय आरु स्वाधीनता आंदोलनत सेइ भाव-परिपुष्ट हय। विंश शताब्दीर तृतीय-चतुर्थ (1920-40) दशकत तेने भाबर जोवार आहे।' (शर्मा 287, 2004) अर्थात डॉ. सत्येन शर्मा के अनुसार देशप्रेम का चरम उत्कर्ष भारत के स्वाधीनता आंदोलन के प्रारंभिक रूप में हुआ है और उसका चरम निदर्शन बीसवीं शताब्दी की कविताओं में देखा जाता है। वस्तुत: 19वीं शती के उत्तरार्द्ध से ही स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव असमीया कविता पर प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से देखा जा सकता है। वास्तव में पराधीनता के समय से ही असमीया कवि तथा गीतिकारों ने कविता और गीतों के माध्यम से जनता के हृदय में सुप्त देशप्रेम जागृत करने का प्रयास किया था। इन कवियों के ओज भरे राष्ट्रीय गीत और कविता ने सभी जाति, धर्म, वर्ण के लोगों को जागृत किया। वस्तुत: साहित्य में गीत, कविता एक ऐसी विधा है, जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। इसीलिए स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने में इन गीत-कविताओं ने मुख्य भूमिका अदा की थी।

विषय की सीमावद्धता :

प्रस्तुत शोध-पत्र के विषय के अंतर्गत स्वाधीनता-आंदोलन से प्रभावित असम के कुछ प्रमुख कवियों के

राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण गीत और कविताओं को सामान्य रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया।

अध्ययन की पद्धति एवं व्यवहृत सामग्रियाँ :

प्रस्तुत शोध-पत्र के अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है। इसी पद्धति से राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण असमीया कविता (स्वाधीनता आंदोलन के विशेष संदर्भ) का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। विश्लेषण करते समय अध्ययन की सुविधा के लिए असमीया कविता संबंधी विभिन्न विद्वानों द्वारा रचित ग्रंथ और भारत तथा असम के इतिहास संबंधी ग्रंथों की सहायता ली गई है।

विषय की आलोचना :

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा बीसवीं शताब्दी में साहित्य में राष्ट्रीय चेतना तेजी से उभरी। देशवासियों ने ब्रिटिश शासन की दुर्भावना को समझा और देश की एकता को गहराई से महसूस किया। चूँकि साहित्यकार अपने युगीन परिवेश से अछूता नहीं रह सकता, यही कारण है की उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के असमीया कवि समाज की कविताओं में जो राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम की लहर दौड़ रही थी, यही राष्ट्रीय चेतना का स्वर इस काल के साहित्य में परिलक्षित होता है। वस्तुत: स्वाधीनता आंदोलन की धूम, देश में मची हलचल ने कवियों को राष्ट्रवादी काव्य की गंगा बहाने के लिए प्रेरित किया। स्वाधीनता आंदोलन को प्रभावशाली बनाने के लिए और जनता के हृदय में सुप्त देश-प्रेम तथा स्वाधीन भारत का स्वप्न जगाने के लिए नवीन चंद्र बरदलै अंबिकागिरी रायचौधुरी, ज्योतिप्रसाद आगरवाला, विष्णुप्रसाद राभा, नलिनीबाला देवी आदि कवि तथा गीतकारों ने गीत और कविताओं की रचना की। उक्त प्रमुख कवि और गीतिकारों का अनुसरण करते हुए राज्य के विभिन्न स्थानों के लोगों ने स्वाधीनता से संबंधित गीत-कविताओं की रचना की थी, जो साधारण जनता के बीच बहुत लोकप्रिय बने।

असम के इतिहास में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता का सूत्रपात 'यंडाबू संधि' से माना जाता है। पराधीनता की ग्लानि से पीड़ित असमीया लोगों ने गोमधर कुँवर और पियली फूकन के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह की घोषणा की। इसका प्रमाण इस लोकगीत में देखा जा सकता है :-

खामति, नगाटि, गारो, खाचीयाटी
लगते दफला, मिरि
रंगचिला हाबिते बर मेल पातिछे
फिरिंगिक धरोगोइ बुलि

(बरदलै1.2010)

सन 1857 में भारतवर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध जिस विद्रोह की घोषणा हुई थी, उस विद्रोह में असम से मणिराम देवान शहीद हुए थे। निम्न उल्लेखित लोकगीत इसका प्रमाण है :-

सोनर धोवाखोवात खालि तइ मणिराम
रूपर धोवाखोवात खालि
किनो रजाघरत द्रोह आचरिलि
डिङित चिपजरी ललि

(बरदलै, 2:2010)

इसके अतिरिक्त फुलगुरिर धाबा, पथरूघाटर रण आदि में भी असम की जनता ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह किया था और विदेशी शासन और शोषण के विरुद्ध जन आंदोलन प्रारंभ किया था।

महात्मा गांधी के नेतृत्व में पूरे भारतवर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन प्रारंभ हुआ। असम में भी नवीन चंद्र बरदलै, चंद्रनाथ शर्मा, तरुणराम फूकन, गोपीनाथ बरदलै आदि के नेतृत्व में असम की जनता ने असहयोग आंदोलन में पूरी तरह योगदान किया। 'कामरूप जातीय उन्नति विधायिनी सभा' के माध्यम से अंबिकागिरी रायचौधुरी ने असहयोग आंदोलन में भाग लेने के लिए उदात्त भाषण देकर जनता का आह्वान किया। असम के अधिकांश लोगों ने आंदोलन के प्रचार-प्रसार कार्य में भाग लिया था। भारतवर्ष के स्वाधीनता आंदोलन का प्रतिफलन जिन कवियों की कविता और गीतों में हुआ है, उनमें सबसे प्रथम लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा का नाम उल्लेख किया जा सकता है। उन्होंने अपनी कविता और गीतों के माध्यम से जनता में देश-प्रेम जगाने के प्रयास किया था। निम्नलिखित गीत इस तथ्य को प्रमाणित करता है, यथा : -

आमि असमीया नहउ दुखीया
किहर दुखीया हम ?

सकलो आछिल सकलो आछे
नुबुजू नलओ गम।
(डेका हाजरिका,137.2006)

अर्थात हम असमीया दीन-हीन नहीं हैं। दीन-हीन क्यों होंगे। हमारे पास सब कुछ है। इसीलिए हम इसकी थाह लेना चाहते।

स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी कर्मवीर नबीन चंद्र बरदलै आंदोलन के साथ-साथ कविता और गीत लिखा करते थे। भारत वर्ष को पराधीनता से मुक्त करना ही उनके गीतों का मूल लक्ष था, यथा :-

आमार विषम पण
पूर्ण स्वाधीनता लभिम लभिम
आगत थई मरण
(तालुकदार .41.1995)

अर्थात हमारा मूल लक्ष स्वाधीनता है । स्वाधीनता के लिए हम मरने के लिए भी तैयार हैं।

स्वाधीन भारत स्वतंत्र भारत
बताहत बाजे सुर
भारत संतान जीयाई थाकोते
इ सुर नपरे उर
(बरदलै.25.2010)

अर्थात हवा में भी स्वाधीन भारत का सुर बज रहा है। जब तक भारतवासी जीवित रहेंगे, तब तक स्वाधीन भारत के लिए यह सुर बजता रहेगा ।

असमीया साहित्य के रोमांटिक युग प्रसिद्ध कवि अंबिकागिरी रायचौधुरी की कविता में स्वाधीनता आंदोलन का प्रत्यक्ष प्रभाव देखा जाता है। उनके द्वारा रचित ओजपूर्ण गीत और कविताओं ने स्वाधीनता आंदोलन में योगदान देने के लिए जनता को प्रेरित किया। सन 1926 के पांडू कांग्रेस अधिवेशन में उनके द्वारा रचित गीत गाया था। उक्त अधिवेशन का शुभारंभ उनके द्वारा रचित निम्नलिखित गीत से किया गया था :-

आजि बंदों की छन्देरे समागत विराट
नर नारायण रूप, नर नारायण रूप
लांछित पराधीन कुंचित चित-मन नाइक
फूल-चंदन-धूप नाइ फूल-चंदन-धूप
(बरदलै. 32.2010)

(अर्थात आज हमारे सामने नर नारायण का विशाल रूप है। किस छंद से उनकी वंदना की जाए, क्योंकि आज हम पराधीन हैं, लांछित हैं। इसीलिए हमारा मन संकोचित हो गया है। आज वंदना करने के लिए हमारे पास फूल-चंदन, धूप नहीं हैं।)

कवि रायचौधुरी ने देश के युवावर्ग को देश की स्वाधीनता के लिए जागृत करने के लिए निम्नलिखित कविता के माध्यम से आह्वान किया :-

जाग डेका तेज, वज्र कठिन
भाङि पुनु गढ़ा हातूरी लोइ
स्वदेश सेवात भंदामी बोर
भाङि उरी जक चूर्ण हय
(बरदलै.32.2010)

(अर्थात हे युवा शक्ति ! आलस्य त्याग कर पुनः हथौड़ा लेकर निर्माण करो, क्योंकि देश सेवा में भंडामी नहीं होना चाहिए।)

महात्मा गांधी जब गुवाहाटी आए थे, तब नवीनचंद्र बरदलै ने अंबिकागिरी रायचौधुरी का परिचय गांधीजी के साथ इस प्रकार कराया था कि ये आज से पाँच/छह साल पहले से ही गीतों के माध्यम से जनता के बीच स्वाधीनता आंदोलन के अहिंसा-तत्व के प्रचार-प्रसार में लगे हुए हैं।

सन 1921 में कवि को बंदी बनाकर जेल में रखा गया। जेल में शौचालय साफ करते समय उन्होंने कविता के माध्यम से देश का जनता का आह्वान करने का प्रयास किया कि अगर जनता अभी स्वाधीनता के प्रति सचेत नहीं होगी, तब विश्व दरबार में भारतवर्ष का कोई स्थान नहीं रहेगा, यथा :-

वीर बेशेरे धर झारू धर
जातिर जीवन कर मनोहर
सारि पुचि चुके कोने
जत जि आछे जाहि जाबर
नहले जे विश्व सभात नहब तोर भार ठाइ
(बरदलै.35.2010)

(अर्थात वीर वेश धारण करके जाति को साफ करो। जिस प्रकार झाड़ू से एक स्थान का कूड़ा-कटका साफ किया जाता है, उसी प्रकार देश के कोने-कोने में

करो, नहीं तो विश्व दरबार में बैठने के लिए स्थान नहीं मिलेगा।)

स्वाधीनता आंदोलन के समय का एक उल्लेखनीय कवि हैं- ज्योतिप्रसाद आगरवाला, जिनके द्वारा रचित गीत और कविता ने असहयोग आंदोलन को नवीन चेतना प्रदान की थी। उदाहरण के रूप में उनके द्वारा रचित निम्नलिखित गीत ले सकते हैं :-

गाँधीर कथा शुनिबले सदाय हुचियार
मइ भलन्टियार
उजनित बोले साइट गहरी (सत्याग्रह)
नमनीत भेलेनडार
कोनोए बोले चेछासेवक
तथापिऊ मूर गरम बुकुत स्वराजर जुई
ज्वलिछे भमक भमक
स्वाधीनता आनिबले
देशत लगाऊ खलक

(बरदलै.45.2010)

(अर्थात गांधीजी का आदेश सुनने के लिए स्वयं सेवक सदा सावधान रहते हैं। कोई इन्हें सत्याग्रही वालंटियर और कोई स्वयंसेवक कहता है। जो भी हो, उनके हृदय में स्वराज्य की आग धधक रही है और स्वाधीनता लाने के लिए देश में हलचल मचाने को तैयार हैं।

असमीया जाति को प्रेरणा देने के लिए वे लिखते हैं:-

लूइटर पाररे आमि डेकालरा
मरिबले भय नाइ।
मुकुटि मेघर महान मेजि
तेजाल फिरींगती छाइ

आमि आगे बाढ़ि
डिङि पाति पाति
तेजरे बलिशाल जामे बुलाइ

(बरदलै.34.2010)

ज्योति प्रसाद आगरवाला के साथ- साथ असम के स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी कवि के रूप में विष्णु प्रसाद राभा का नाम ले सकते हैं। उनके द्वारा रचित ओजमयी गीतों ने जनता को स्वाधीनता के लिए प्रेरणा दिया था, यथा :-

'अ असमीया डेका दल

असमीया समनीया आगबाढ़ि जाऊँ बल
आगबाढ़ि जाऊँ बल

(दास .137.2008)

(अर्थात हे असमीया तरुण दल! हम एकसाथ आगे बढ़ेंगे।)

स्वाधीनता आंदोलन में नलिनी बाला देवी की भूमिका भी उल्लेखनीय है। असहयोग आंदोलन में उन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई थी। जिस दिन भारतवर्ष की स्वाधीनता घोषणा की गई थी, उसी दिन ही कवि ने निम्नलिखित गीत की रचना की थी, यथा :-

पोनद्धर अगस्तर मुक्तिर प्रथम प्रभात
हिमाद्रिर शिखरत त्रिरंगा पताका उरे दुंदुभि ध्वनित

(देवी. 213.2012)

(अर्थात पंद्रह अगस्त स्वाधीन भारत का प्रभात। हिमालय शिखर पर तिरंगा लहर रहा है।)

इसके अतिरिक्त कनक चंद्र शर्मा, पद्मधर चलिहा के ओजमयी गीतों ने स्वाधीनता आंदोलन को शक्तिशाली बनाया था। उदाहरण के रूप में पद्मधर चलिहा का निम्नलिखित गीत उल्लेखनीय है :-

सौ जे स्वराज निचान
उन्नत शिरे होवा आगुवान

(बरदलै.64,2010)

(अर्थात स्वराज्य का झंडा लहरा रहा है। इसीलिए सिर उठाकर आगे बढ़ो।)

इन प्रमुख कवियों के अतिरिक्त अनेक कवि तथा गीतिकार हैं, जिहोंने भी स्वाधीनता के प्रति जनता को जागृत करने के लिए गीत और कविता की रचना की।

अत: उनके गीत और कविताओं में भी स्वाधीनता आंदोलन का प्रभाव देखा जाता है, यथा :-

42 चनते अ कनकलता
गाँधीजीर वाणीरे अ' कनकलता
लैछिला आशीर्वाद, अ' कनकलता

करिला एम. भि पाछ, अ' कनकलता
झंडा उराऊते प्राणटि एरिला
(बरदलै.83.2010)

(अर्थात सन 1942 में गांधीजी की वाणी से आशीर्वाद पुष्ट कनकलता ने एम.भि पास किया था। किंतु तिरंगा झंडा लहराते समय प्राण त्याग किया।

पानवारीत बागरिल गाड़ी।
बाबाजीए खुडाले डाढ़ी।।
हुचरी बाबु उ दलौ चराई।
गाँधीर नाम लोई आह उलाइ।।

निष्कर्ष :

स्वाधीनता आंदोलन का समय राष्ट्रीय चेतना के उत्कर्ष का समय था। उस समय हर भारतीय जनमानस में राष्ट्रप्रेम का भाव समुद्र की लहरों की तरह हिलोरे मार रहा था। अत: असमीया कविता और गीतों में स्वाधीनता आंदोलन का पूर्ण प्रतिफलन पाया जाता है और असमीया कवियों की कविताएँ देश के प्रति अनुराग की भावना जगाने के साथ-साथ जननी जन्म भूमि के पावन चरणों पर श्रद्धानत होकर आत्मबलिदान कर देने की प्रेरणा प्रदान करती हैं। इस प्रकार तत्कालीन असमीया कविता में जहाँ एक ओर पराधीनता के प्रति क्षोभ का भाव अभिव्यक्त किया गया है, वहीं दूसरी ओर देश के गौरवपूर्ण अतीत का गुणगान करते हुए देश के प्रति प्रेम का भाव प्रकट हुआ है। कविता तथा गीत एक ऐसी विधा है, जो लोगों के हृदय को स्पर्श करती है। इसीलिए पराधीनता के समय में देशवासियों के हृदय में सुप्त देशप्रेम को जगाने के लिए कवियों ने ओजमय गीत-कविताओं की रचना की थी। इन गीत-कविताओं से अनुप्रेरित अनेक अनाम कवियों ने बिहूगीत, विवाह गीत आदि में भी स्वाधीनता आंदोलन की भावना को व्यक्त किया था। अत: तत्कालीन समय के अधिकांश गीत-कविताओं में स्वाधीनता आंदोलन की पूर्ण छवि देखी जाता है। ❑

संदर्भ ग्रंथों की सूची :

1. गोगोई, लीला (संपा)- आधुनिक असमीया साहित्य परिचय, बनलता, 2002
2. डेका हजारिका, करबी : असमीया कविता, बनलता, 2006
3. देवी, नलिनी बाला - एरिअहा दिनबोर, लॉयर्स बुक स्टॉल, 2012
4. दास, योगेश तथा अन्य (संपा) - अंबिकागिरी रायचौधुरी, असम प्रकाशन परिषद, 1968
5. पुजारी, डॉ. अर्चना (संपा) - असमीया कवितार विचार विश्लेषण, ज्योति प्रकाशन, 2000
6. दास, योगेश तथा अन्य (संपा) - विष्णु प्रसाद राभा, राभा रचनावली, प्रकाशन संघ, 2008
7. पुजारी, डॉ. अर्चना (संपा) - असमीया कवितार विचार विश्लेषण, ज्योति प्रकाशन, 2000
8. फुकन, नीलमणि (सम्पा) - कुरि शतिकार असमीया कविता, असम प्रकाशन परिषद, 2005
9. बरदलै, निर्मलप्रभा (संपा) - स्वाधीनता संग्रामर असमीया गीत और कविता, साहित्य अकादमी, 2010
10. शर्मा, डॉ. सत्येन -असमीया साहित्यर इतिवृत
11. शइकिया, नगेन - असमीया कविता आरु अन्यान्य विषय, चंद्र प्रकाश, 1966
12. हाजरिका, बिमल कुमार - रूपकोंवर, कलागुरु, सुधाकंठ आरु अन्यान्य, वाणी प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 2011

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

❖ वर्ष : 73 ❖ अंक : 4/5 ❖ जुलाई/अगस्त, 2023

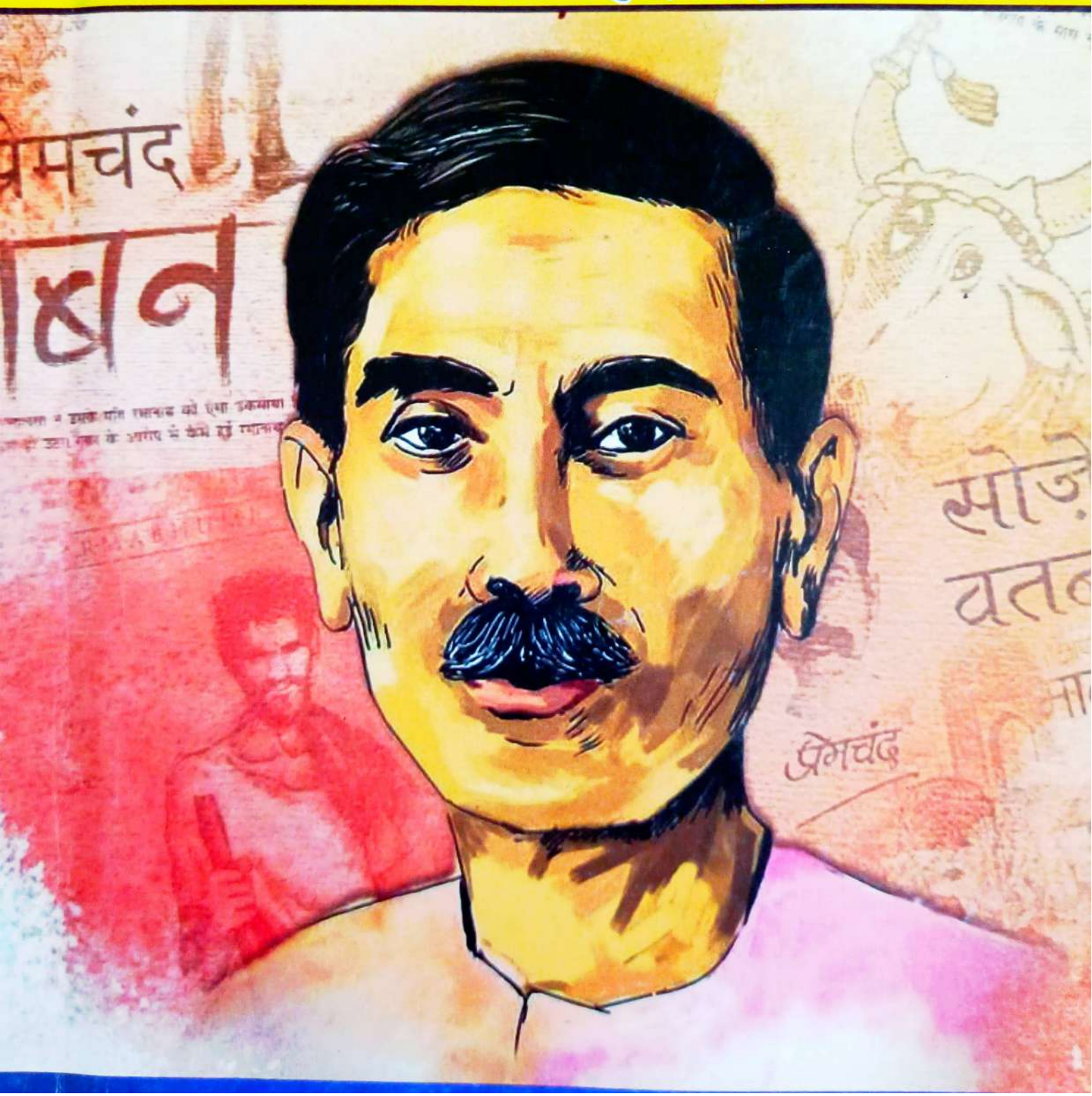

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32

फोन : 9101541395, 9101541380

ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

आवरण पृष्ठ : इंटरनेट से साभार

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

निरालाकृत 'तुलसीदास' की सांस्कृतिक चेतना



डॉ. मालविका शर्मा

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
राधा गोविंद बरुवा महाविद्यालय
फटाशील आमबाड़ी
गुवाहाटी (असम)-781025
मो. 9435551073
ई-मेल : malabika.sarma123@gmail.com

शोध सार :

महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' आधुनिक हिंदी साहित्य के एक समर्थ हस्ताक्षर हैं। वे छायावाद के प्रमुख प्रवर्तकों में से एक हैं। उनकी कविताओं में विषय की विविधता और नवीन प्रयोग की बहुलता मिलती है। राष्ट्र प्रेम, प्रकृति प्रेम, नारी चेतना, शोषण और वर्गभेद के विरुद्ध विद्रोह तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान उनकी काव्यों की विशेषताएं हैं। निराला कृत 'तुलसीदास' एक प्रसिद्ध प्रबंध काव्य है। इसका प्रकाशन सन् 1938 में हुआ था। 'तुलसीदास' का कथानक जन सामान्य में प्रचलित तुलसीदास के निजी जीवन में घटित घटनाओं से संबंधित है। प्रस्तुत कृति के माध्यम से निराला ने भारतीय परंपरा के गौरवशाली मूल्यों की प्रतिष्ठा करने का प्रयाास किया है। वस्तुतः तुलसीदास प्रबंध काव्य की दृष्टि से एक सफल कृति है।

बीज शब्द :

संस्कृति, अध्यात्म, चेतना, दर्शन, स्त्री-विमर्श, मानवता, छायावाद।

प्रस्तावना :

महाप्राण निराला आधुनिक हिंदी काव्य के इतिहास में एक समर्थ हस्ताक्षर तथा छायावादी काव्य के आधार स्तंभ हैं। वे एक ऐसे युगांतकारी कवि हैं, जिनकी रचनाओं में तत्कालीन मानव की पीड़ा, सांस्कृतिक पुनरुत्थान, परतंत्रता के प्रति उत्पन्न तीव्र आक्रोश की ध्वनि सुनाई पड़ती है। उनके काव्यों में भी वही स्वर प्रमुख रूप से व्यक्त होता है।

निराला कृत्त 'तुलसीदास' हिंदी काव्य जगत में एक आलोक स्तंभ है। महाप्राण निराला उन चार छायावादी स्तंभों में से एक हैं, जिनके आधार पर छायावाद का विशाल भवन खड़ा है। छायावाद युग भारत के लिए अस्मिता की खोज का युग है। अर्थात् छायावाद भारत की आत्मिक पहचान का युग है। इसीलिए छायावादी काव्य की मूल चेतना भारतीय संस्कृति है।

विषय का महत्व :

सदियों की दासता के कारण भारतीय जनता आत्म केंद्रित होती हुई रूढ़िग्रस्त हो गई थी। पाश्चात्य शिक्षा के फलस्वरूप भारतीय मनीषी अपनी त्रासदीपूर्ण विघटनमयी स्थिति तथा सांस्कृतिक निस्सारता के प्रति सजग हुई। सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए भारतीय जनगण उद्दीप्त हो उठा। इसके फलस्वरूप छायावादी काव्य की सृष्टि हुई। छायावादी काव्यों में सांस्कृतिक नवजागरण व्यापक भावभूमि पर आधारित है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी छायावाद को केवल अभिव्यक्ति की लाक्षणिक प्रणाली विशेष न मानकर उसमें नूतन सांस्कृतिक मनोभावना तथा स्वतंत्र जीवन दर्शन का पोषण मानते हैं।[1]

कवि एक विशिष्ट प्रतिभा से संपन्न सामाजिक प्राणी होता है। उसके व्यक्तित्व का निर्माण उस समाज की पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिवेशों के बीच होता है, जिसका वह अंग होता है। संस्कृति उन गुणों की समुदाय समझी जाती है, जो व्यक्तित्व को परिष्कृत एवं समृद्ध बनाते हैं।

व्यक्तित्व और कृतित्व का गहरा संबंध होता है। छायावादी कवियों के व्यक्तित्व के निर्माण में महान भारतीय संस्कृति का अमिट प्रभाव है, अत: भारतीय संस्कृति के विविध तत्व छायावादी काव्य में अनायास ही परिलक्षित होते हैं।

जनता में आत्मविश्वास का संचार करने का एक उपाय है-अतीत की गरिमा का सजीव चित्रण। परिणामस्वरूप छायावादी कवियों ने संस्कृति के गौरव गान के माध्यम से भारत के गौरवमय अतीत के प्रति देशवासियों का ध्यान आकर्षित करने का पूर्ण प्रयास किया है। छायावादी कवियों ने अतीत के विशेष रूप से महापुरुषों, महाकवियों, राजाओं का गौरव गान किया है- जैसे 'कामायनी' महाकाव्य में जयशंकर प्रसाद ने उस प्राचीन कथानक को आधार बनाया है, जिसके अनुसार मनु को छोड़कर संपूर्ण देव-जाति का प्रलय- जल में विनाश हो जाता है तथा मनु और श्रद्धा के संयोग से मानव सभ्यता का श्रीगणेश होता है। इसी प्रकार महाप्राण निराला ने देवी सरस्वती, तुलसीदास, राम की शक्तिपूजा, जागो फिर एक बार नामक कविताओं में अतीत के



महापुरुषों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि के पुष्प चढ़ाए हैं। उन्होंने तत्कालीन भारत की दुर्दशा का मार्मिक चित्रण करके देशवासियों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है-

'क्या यह वही देश है -
भीमार्जुन आदि का कीर्तिक्षेत्र।'[2]

भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि दार्शनिक और आध्यात्मिक धरातल पर प्रतिष्ठित है। छायावादी कवियों के काव्य में अद्वैतवाद, अध्यात्मवाद, अरविंद दर्शन, भौतिकवाद, क्षणवाद चेतन, चैतन्य और चेतना संबंधित विचार, नियतिवाद, मानवतावाद आदि के साथ-साथ विशिष्ट द्वैतवाद जैसी अनेक दार्शनिक मान्यता पाई जाती हैं। उदाहरण के रूप में प्रसादजी के 'कामायनी', निराला के 'जागो फिर एक बार' आदि उल्लेखनीय हैं।

भारतीय संस्कृति का मूलभूत तत्व - नारी सम्मान की भावना छायावादी कवियों के काव्य में चरम उत्कर्ष पर है। छायावादी कवियों ने अनंत स्वरूपा नारी की महत्ता स्थापित करके उसे मानव की चिर सहचरी ही नहीं, बल्कि असीम प्रेरणा और अखंड विश्वास का स्रोत सिद्ध किया है। प्रसादजी के शब्दों में-

'नारी तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास रजत नग पगतल में,
पीयूष स्त्रोत ही बहा करो जीवन के सुन्दर समतल में।' [3]

छायावादी कवियों में से सुमित्रानंदन पंतजी की नारी के प्रति दृष्टि कोमल थी। महादेवीजी की दृष्टि में भी नारी त्याग, बलिदान, साधन, भक्ति भावना आदि की साकार मूर्ति है और अबोध शक्ति का भंडार है। कवि निराला के काव्यों में नारी एक ओर सौंदर्यमयी मनमोहिनी और मनोरंजना है तो दूसरी ओर वह निष्काम प्रेममयी, शांति सुखदायी, पतिपरायणा और विषय-वासना को तुच्छ समझने वाली भी है।

छायावादी काव्यों में प्रेम का उदात्त चित्रण मिलता है। यह प्रेम मूलत: नारी प्रेम, प्रकृति प्रेम, राष्ट्र-प्रेम मानव-प्रेम, ईश-प्रेम आदि के रूप में अभिव्यक्त हुआ है।

प्रकृति मानव की चिर सहचरी है। प्रकृति में ही भारतीय कविता का जन्म हुआ। प्रकृति का मानवीकरण छायावादी काव्य की विशिष्टता है। इसीलिए प्रसादजी ने प्रकृति को निर्जीव न मानकर चेतन और स्पंदनशील माना है। पंतजी को कविता की प्रेरणा प्रकृति से ही मिली। निराला के काव्यों में प्रकृति का सजीव चित्रण उपलब्ध होता है।

विषय का उद्देश्य :

निराला कृत 'तुलसीदास' छायावादी महाकाव्यों में से एक है। अन्य छायावादी कृतियों की भाँति 'तुलसीदास' की मूल-चेतना भारतीय संस्कृति है। तुलसीदास के माध्यम से उन्होंने प्रस्तुत काव्य में भारतीय परंपरा के गौरवशाली मूल्यों की प्रतिष्ठा करने का प्रयास किया है।

'तुलसीदास' प्रबंध काव्य की दृष्टि से अत्यधिक सफल है। 'तुलसीदास' में ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनीतिक अर्थ स्पष्ट हैं। उसमें उनकी दुहरी अर्थ व्यंजना है, जिसे पकड़ने में कोई कठिनाई नहीं होती। यहाँ कवि ने तुलसी के माध्यम से अपनी सांस्कृतिक चेतना को उजागर किया है।

निराला ने 'तुलसीदास' काव्य लिखने की प्रेरणा कविवर तुलसी के निजी जीवन में घटित घटना से प्राप्त किया और रत्नावली से संबंधित लोककथा के आधार पर इस रचना का ताना-बाना बुना है।

उपर्युक्त उल्लेखित विषय के बारे में विश्लेषण करना प्रस्तुत विषय का उद्देश्य है।

अध्ययन की पद्धति एवं विश्लेषण :

प्रस्तुत विषय का अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है। इसी पद्धति से 'तुलसीदास' काव्य की सांस्कृतिक चेतना का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। विश्लेषण करते समय भारतीय संस्कृति से संबंधित विभिन्न ग्रंथों की सहायता ली गई है। प्रस्तुत शोध पत्र के लिए आधुनिक भाषा पद्धति के अंतर्गत सातवें संस्करण की प्रणाली को अपनाया गया है।

विषय का अध्ययन :

'तुलसीदास' के कथानक का प्रारंभ मुगलों के आक्रमण के वर्णन से हुआ है। उनके आक्रमण से हिंदू शासन-सत्ता ही पराजित नहीं हुई, वरन उनकी सभ्यता और संस्कृति को भी भारी धक्का पहुँचा। इस सांस्कृतिक अंधकार का चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है -

'भारत के नभ का प्रभापूर्य
शीतलोच्छाय सांस्कृतिक सूर्य
अस्तमित आज रे-तमस्तुर्य दिमंडल दिड्मण्डल,
उर के आसन पर शिरस्त्राण
शासन करते हैं मुसलमान, ।' [4]

इस प्रकार हिंदू सभ्यता का सूर्य अस्त हो गया और मुस्लिम चंद्रमा का उदय हुआ। इस अंधकारमय परिस्थिति में तुलसीदास का जन्म हुआ। एक दिन तुलसीदास अपने मित्रों के साथ घूमने गए और चित्रकूट की प्रकृति की शोभा देखकर उनका हृदय विशेष रूप से प्रभावित होकर स्फूर्ति से परिपूर्ण हो गया। प्रकृति से उन्हें संदेश मिला जड़ से चेतन की ओर बढ़ने का, रात्रि से दिन की खोज करने का। मन की अत्यंत ऊँची उड़ान से उन्होंने देखा कि भारत की सभ्यता एक जाल में फँसी हुई है, जैसे कि सूर्य की आभा को राहु ने ग्रास लिया। अर्थात देश में छोटे-छोटे संप्रदाय परस्पर संघर्ष में लगे हैं, वर्ण-व्यवस्था विशृंखल हो गई है। इसीलिए ये विरोध से द्वंद्व समर करने के लिए तैयार हो उठे और देश के अंधकार को विनष्ट करने के लिए हृदय में संकल्प जगाने लगे। यथा-

'करना होगा यह तिमिर पार -
देखना सत्य का मिहिर-द्वार-' [5]

उसी समय तुलसीदास को अपनी प्रिय पत्नी के यौवन तरंगों से आलोड़ित नेत्रों के आगे समस्त संसार के अन्य सभी भोग, ऐश्वर्य, रूप तुच्छ प्रतीत हुए।

एक दिन जब तुलसीदास बाजार चले गए, तब रत्नावली का भाई रत्नावली को मायके ले गया।

घर आने पर तुलसी को जब उनकी पत्नी नहीं मिली तो वे भी ससुराल चल पड़े। यद्यपि ससुराल में बड़ी खातिर हुई फिर भी वहाँ के कुछ लोग तुलसीदास के संबंध में कानाफूसी करने लगे। भाभी के व्यंग्य से रत्नावली जल उठी और उसे लगा कि पति के मन में बैठा हुआ चोर उसे निरावरण करना चाहता है। रात में एकांत होने पर तुलसीदास ने अपनी पत्नी का एक नवीन रूप देखा है। रत्नावली योगिनी की तरह उठकर खड़ी हो गई और लक्ष्मी की तरह बोली-

'धिक! धाए तुम अनाहूत,
धो दिया श्रेष्ठ कूल धर्म धूत,
राम के नहीं, काम के सूत कहलाए!' [6]

पत्नी रत्नावली के इन शब्दों को सुनकर तुलसीदास के हृदय में प्रबल वेग से ज्ञान के संस्कार जागृत हो उठे और तत्क्षण ही उनकी पत्नी के प्रति कामुक आसक्ति भस्म-सी हो गई। तुलसी ने आश्चर्य से देखा कि जैसे वह पत्नी नहीं, बल्कि नीलवसना स्वयं शारदा देवी ही समक्ष उपस्थित हैं, जो सृष्टि का संदेश सुना रही हैं। इस प्रकार तुलसीदास रत्नावली को समझाकर घर से बाहर आए। हृदय में वही परिचित मूर्ति थी और वह अपना क्षुद्र रूप छोड़कर विश्व का आश्रय बन गई। तुलसीदास की यह विजय भारतीय संस्कृति की विजय है। यही है तुलसीदास नामक काव्य कृति का संक्षिप्त कथानक ।

'तुलसीदास' के कथानक के संबंध में डॉ. रामविलास शर्मा ने यह कहा कि - ''तुलसीदास में मूल चित्र गोस्वामी तुलसीदास के अंतर्द्वंद्व का है।'' [7]

वास्तव में 'तुलसीदास' के कथानक का ताना-बाना 'तुलसी' और 'तुलसीदास' से संबंधित कथा के आधार पर बुना गया है। इसके साथ ही इस काव्य का मूल स्रोत महाकवि तुलसीदास का मध्यकालीन भारतीय संस्कृति के पतन का उद्धार करने के लिए बेचैन होना भी। महाप्राण निराला भी अंग्रेजी सभ्यता-संस्कृति के चंगुल से महान भारतीय संस्कृति की मुक्ति के लिए बेचैन थे।

सांस्कृतिक चेतना का संबंध राष्ट्र के सांस्कृतिक जीवन से होता है। संस्कृति राष्ट्र के जीवन का प्राण तत्व होती है। निराला कृत 'तुलसीदास' को छायावादी काव्य-कला सांस्कृतिक चेतना का अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत करने का प्रयास करेंगे -

(अ) नायक तुलसीदास सांस्कृतिक - पुनरुत्थान के प्रतीक
(आ) दार्शनिकता और आध्यात्मिकता
(इ) नारी : उद्बोधिका शक्ति
(ई) राष्ट्रीय चेतना
(उ) प्रेम
(ऊ) सौंदर्य
(ऋ) प्रकृति
(ए) पारिवारिक और सामाजिक रीति-रिवाज
(ऐ) शोषकों के प्रति आक्रोश और शोषितों के प्रति सहानुभूति
(ओ) लोक-संस्कृति
(औ) सांस्कृतिक भाषा शैली

(अ) नायक तुलसीदास - सांस्कृतिक पुनरुत्थान के प्रतीक :

'तुलसीदास' काव्य के नायक तुलसीदास सांस्कृतिक पुनरुत्थान का प्रतीक हैं। सर्वप्रथम वे काव्य तथा शास्त्र अध्ययन करने वाले व्यक्ति के रूप में हमारे सामने आते हैं। वे अच्छे संस्कार वाले व्यक्ति हैं। विद्याध्ययन के पश्चात वस्तु जीवन में उतरते हैं। भ्रमण के लिए चित्रकूट की ओर जाते हैं। चित्रकूट पहुँचने पर उनके सम्मुख रहस्य स्पष्ट हो जाता है। वे यह जान जाते हैं कि मुसलमानों के प्रभाव से भारतीय संस्कृति मलिन है। प्रकृति तुलसी के जातीय संस्कारों को जगाती है। वे देश की आजादी की कल्पना करते हैं। कवि का मन निरंतर ऊँचाई की ओर बढ़ता चला जाता है और सत्य के द्वार को देखना चाहते हैं-

'करना होगा यह तिमिर पर
देखना सत्य का मिहिर-द्वार-'[8]

तुलसीदास के संकल्प में रत्नावली का सौंदर्य बाधक बन जाता है। फलस्वरूप उनका मन ऊँचाई से नीचे उतर आता है ।

कवि तुलसीदास के जीवन में दूसरा मोड़ उस समय आता है, जब वे बिन बुलाए पत्नी के पीछे-पीछे ससुराल पहुँच जाते हैं। रत्नावली के धिक्कार से कवि की जड़ता टूट जाती है और उनका राष्ट्र-प्रेम पुनः जाग उठता है। वे यह सोचते हैं कि सुबह होते ही अपने संकल्प को पूरा करने में लग जाना चाहिए-

'जागो जागो आया प्रभात,
बीती वह बीती अंध रात,'[9]

इस प्रकार निराला ने 'तुलसीदास' में कवि तुलसी का चित्रण भारतीय संस्कृति के रक्षक के रूप में किया है। बाबुराम त्रिपाठी के अनुसार **जिस प्रकार तुलसीदास उसके जीर्णोद्धार के लिए छटपटा रहे थे, उसी समय इसमें निराला भी अपने देश की आजादी के व्याकुल दिखाई देते हैं।**[10] जिस प्रकार तुलसीदास का युग दासता तथा पराधीनता का युग था, उसी प्रकार निराला का युग भी दासता और पराधीनता का युग था। तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' के माध्यम से जहाँ एक ओर आक्रोश व्यक्त किया, वहीं दूसरी ओर अपने चरित्र के माध्यम से विकल्प प्रस्तुत करते का भी सफल प्रयास किया है। इसीलिए निराला ने प्रस्तुत 'तुलसीदास' शीर्षक काव्य में तुलसीदास को नायक के रूप में लेकर तुलसीकालीन भारतीय संस्कृति को चित्रित करके युग की सामाजिक, आर्थिक दुर्व्यवस्था को अंकित करने का प्रयास किया है।

(आ) दार्शनिकता और आध्यात्मिकता :

प्राचीनकाल से भारतभूमि ऋषि-मुनियों और दार्शनिकों की भूमि रही है। साहित्य में 'दर्शन' का प्रयोग जीवन और जगत के संदर्भ में किया जाता है। जीवन और जगत से संबंधित 'सत्य' को युक्ति-युक्तता से दिखाने वाला ज्ञान दर्शन कहलाता है। अद्वैत दर्शन को विद्वानों ने आधुनिक हिंदी काव्य का मेरूदंड कहा है। निराला के तुलसीदास काव्य में भी इस अद्वैतवादी दर्शन की झलक मिलती है। नायक तुलसीदास ब्रह्म से मिलने में बाधाग्रस्त होते हैं, क्योंकि उनकी आत्मा पर माया का प्रभाव है। माया के कारण प्रकृति का स्वरूप उन्हें कुछ चेतन-अचेतन जैसा लगता है।

निराला, अरविंद-दर्शन से प्रभावित थे। तुलसीदास में अरविंद-दर्शन की स्पष्ट झलक मिलती है। विशेष रूप से नायक तुलसीदास के संदर्भ में मन की ऊर्ध्वगति तथा अधोगति का बड़ा ही आकर्षक चित्रण हुआ है। चित्रकूट की प्राकृतिक छटा का उपभोग करते-करते तुलसी के मन का ऊर्ध्वगमन होता है। उनके ज्ञान-चक्षु खुल जाते हैं। वे राम के अहल्योद्धार की तरह भारतीय संस्कृति का उद्धार करने का संकल्प लेते हैं। किंतु पत्नी का सौंदर्य उनके मन का बाधक बन जाता है। परंतु जब पत्नी की फटकार उनके कानों में पड़ती है तो माया का आवरण फट जाता है और उनके संस्कार जाग उठते हैं-

'जागा, जागा, संस्कार प्रबल,
रे गया काम तत्क्षण वह जल'[11]

(इ) नारी : उद्‌बोधिका शक्ति :

किसी भी देश संस्कृति की स्थिति उसमें निहित नारी की सामाजिक स्थिति से पता चलता है। भारतीय संस्कृति के आधार स्रोत वेद हैं और वेदों में नारी का उदात्त रूप देखने को मिलता है। भारतीय संस्कृति में नारी को शक्ति का प्रतीक माना गया है। एक ओर वह पुरुष की सहचरी है तो दूसरी ओर 'माँ'।

महाप्राण निराला नारी को अत्यंत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। तुलसीदास में निराला ने नारी के उदात्त रूपों का चित्र अंकित किया है। रत्नावली हमारे सामने दो रूपों में आती है। उसका पहला रूप है भारतीय गृहिणी का। रत्नावली इस रूप में एक पतिपरायणा नारी के रूप में चित्रित है। वह अपने नाम के अनुरूप सुंदर है और हमेशा पति को प्रसन्न रखती है। उसके चरित्र का विश्लेषण करने हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने इस प्रकार कहा है - **''अज्ञान को अंधकार में सत्य की यष्टि की तरह वह प्रिय को पार ले जाने वाली है। श्रद्धा की प्रतिमा की तरह वह माया के घर में प्रिय की निद्रा की**

सीमाएँ बाँधे हुए है।'' [12]

रत्नावली का दूसरा रूप प्रेरक और असाधारण देवी के रूप में प्रतिष्ठित है। आदिकाल से ही भारतीय नारी पति के लिए प्रेरणादायिनी रही है। निराला ने तुलसीदास में इसी भारतीय संस्कृति से प्रभावित पति के लिए आत्मदर्शन की प्रेरणादायिनी नारी का रूप खींचा है। उनकी प्रेरणा से ही तुलसी में अतीत संस्कार जाग उठता है। नारी के इस रूप पर उन्होंने सरस्वती और भारती का रूप आरोप किया है।

(ई) राष्ट्रीय चेतना :

कवि निराला की राष्ट्रीय चेतना अन्य छायावादी कवियों की तरह न होकर परोक्ष है। 'तुलसीदास' काव्य में कवि ने भारत की दुरवस्था का जो चित्र खींचा है, उससे उनकी राष्ट्रीय चेतना मुखरित होती है-

'भारत के नभ का प्रभापूर्ण
शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य
अस्तमित आज रे- तमस्तुर्य दिङ्गण्डल
उर के आसन पर शिरस्त्राण
शासन करते हैं मुसलमान' [13]

प्रस्तुत काव्य में निराला ने जिस सांस्कृतिक पतन का चित्र खींचा है वह तुलसी के युग का सत्य है। नायक तुलसी के मन में यह विचार उत्पन्न होता है कि विदेशियों का प्रभाव निजी कमजोरी का कारण है। इस तरह का विचार आते ही तुलसी में राष्ट्रीयता की भावना जमती है और वे देश की आजादी के लिए संकल्पबद्ध होते हैं।

निराला ने इसीलिए अपने राष्ट्रप्रेम को व्यक्त करने के लिए तुलसी जैसे समन्वयकारी कवि को अपनी कविता का नायक चुना, क्योंकि वे जानते थे कि उनके और कवि तुलसीदास के युग की परिस्थितियाँ समानधर्मी थीं।

(उ) प्रेम :

प्रेम एक शाश्वत वृत्ति है। प्रेम भाव कल्याणकारी होता है । अत: इसे संस्कृति का एक महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है। 'तुलसीदास' काव्य में उन्होंने प्रेम के विविध रूपों का चित्रण किया है, जिसमें नारी प्रेम प्रमुख है। उन्होंने नारी के प्रति प्रणय और श्रद्धा समन्वित दृष्टिकोण व्यक्त किया है।

निराला ने तुलसीदास में प्रकृति-प्रेम का व्यापक चित्रण किया है। उन्होंने प्रकृति के स्वतंत्र अस्तित्व को प्रतिपादित करते हुए प्रकृति के माध्यम से नायक को उद्‌बोधित करवाया है यथा-

'तुम रहे छोड़ गृह मेरे कवि,
देखो यह धूलि धूसरित छवि
छाया इस पर केवल जड़ रवि खर दहता।' [14]

तुलसीदास काव्य में कवि ने भारत के सांस्कृतिक पतन का चित्र अंकित करके राष्ट्र प्रेम का परिचय दिया है।

मानव-प्रेम भारतीय संस्कृति का मूलभूत तत्व है। तुलसीदास काव्य में भी निराला ने दीन-हीन के प्रति अपने प्रेम को व्यक्त किया है।

(ऊ) सौंदर्य :

सौंदर्य-बोध और उसकी खोज भारतीय सांस्कृतिक जीवन की मूलभूत विशेषता है। निराला एक सांस्कृतिक चेतना के कवि हैं। उनका सौंदर्यबोध उनके हृदय में स्थित व्यापक प्रेम भावना का परिणाम है। उन्होंने अपने तुलसीदास काव्य में प्रकृति-सौंदर्यबोध का चित्रण किया है।

मानवीय सौंदर्य के दो आधार हैं- स्त्री और पुरुष। तुलसीदास काव्य में उन्होंने इन दोनों को अपनी अभिव्यक्ति की माध्यम बनाया है। उन्होंने तुलसीदास के बाह्य और आंतरिक सौंदर्य के साथ-साथ रत्नावली के दिव्य सौंदर्य का भी चित्रण किया है। यथा-

'देखा शारदा नील-वसना
है सम्मुख स्वयं सृष्टि रशना' [15]

(ऋ) प्रकृति :

भारतीय संस्कृति में प्रकृति का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। निराला ने तुलसीदास में प्रकृति का उदात्त चित्रण किया है। जब तुलसीदास अपने मित्रों के साथ चित्रकूट का पर्यटन करने जाते हैं, तब वहाँ उनको

प्रकृतिगत आह्लाद का आभास होता है। प्रकृति के कण-कण उन्हें नूतन संदेश देते हैं।

(ए) पारिवारिक एवं सामाजिक रीति-रिवाज :

परिवार सामाजिक संगठन की एक महत्वपूर्ण इकाई है। निराला ने 'तुलसीदास' काव्य में तुलसीदास के पारिवारिक जीवन का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह भारतीय समाज के सामान्य परिवार के जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है। रत्नावली के रूप में निराला ने पति-प्रेम में अनुरक्त श्रद्धा और त्याग की मूर्ति का चित्रण किया है।

प्रत्येक समाज में सामाजिक जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए कुछ रीति-रिवाजों की व्यवस्थाएँ हैं। इन व्यवस्थाओं में जब तक युगांतरूप परिवर्तनशीलता एवं गतिशीलता के गुण विद्यामान रहते हैं, तब तक ये समाज के लिए उपादेय रहते हैं, जब इनमें रूढ़िवादी जड़ता आ जाती है तो वह समाज के पतन का कारण बनते हैं। कवि निराला ने तुलसीदास काव्य में विविध वर्णों के पतित जीवन का जो चित्रण किया है, वह कवि तुलसी के समय में जैसा था, वैसा ही निराला के युग में था। उनमें अंतर केवल मुगल और अंग्रेज शासन का था। जीर्ण-शीर्ण व्यवस्था को सांस्कृतिक पतन और विघटन का मुख्य कारण माना है।

(ऐ) शोषकों के प्रति आक्रोश और शोषितों के प्रति सहानुभूति :

शोषकों के प्रति आक्रोश और शोषितों के प्रति सहानुभूति भारतीय जीवन तथा संस्कृति की एक प्रमुख विशेषता है। छायावादी कवि निराला मूलत: मानवतावादी रहे हैं। इसीलिए उनके काव्य में पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति व्यंग्य और उनके शोषण के प्रति तिरस्कार भाव व्यक्त किया है। तुलसीदास काव्य में कवि मानव के सम्मुख उस राजा का उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसने छल-बल से राजा बनकर सभी भौतिक सुख साधना को प्राप्त किया।

(ओ) लोक संस्कृति :

साहित्य को लोक संस्कृति प्रभावित करती है। भारतीय संस्कृति पर विभिन्न लोक संस्कृतियों का प्रभाव पड़ा है।

निराला के काव्यों में लोक संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट है। तुलसीदास काव्य में लोक संस्कृति संबंधी चेतना प्रखर रूप से अभिव्यक्त हुई है। उन्होंने इस काव्य की कथा-वस्तु का चुनाव लोक प्रचलित जनश्रुतियों के आधार पर किया है। तुलसी और रत्नावली का प्रसंग ऐतिहासिक न होते हुए भी भारतवर्ष में उसे ग्रहण कर लिया गया है।

औ) सांस्कृतिक भाषा-शैली :

निराला के काव्यों की भाषा-शैली सांस्कृतिक तत्वों से सन्निविष्ट है। तुलसीदास काव्य में सांस्कृतिक संवेदन के निर्माण में भाषागत सभी सांस्कृतिक उपकरणों का प्रयोग किया है। उन्होंने पंजाब, बुंदेलखंड, कालिंजार, राजापुर, चित्रकूट आदि के अतिरिक्त निर्वाण, मुक्त, वर्णाश्रम आदि संस्कृतिक प्रत्ययों का भी प्रयोग किया है। निराला ने तुलसीदास काव्य में प्रतीक-योजना भी की है। तुलसीदास शब्द प्रतीकात्मक है। एक ओर वे 'रामचरितमानस' के रचयिता कविवर तुलसीदास हैं तो दूसरी ओर वे आध्यात्मिक साधना पथ के पथिक भी। तुलसी के पौधे को भारतीय संस्कृति में पवित्र माना जाता है। इसीलिए तुलसीदास का प्रतीकात्मक अर्थ - पवित्रता की सेवा या साधना करने वाला लिया जा सकता है। इसके अलावा 'विहंग' मन का प्रतीक बनकर आया है-

'गाओ विहंग! सद्ध्वनित गान'[14]

इस प्रकार 'तुलसीदास' काव्य की भाषा सांस्कृतिक शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों से युक्त है।

उपलब्धियाँ :

- तुलसीदास एक प्रबंध काव्य है।
- तुलसीदास का कथानक जनमानस में प्रचलित कथाओं के आधार पर है।
- तुलसीदास में भारत की सांस्कृतिक पतन का चित्र चित्रित किया है।
- तुलसीदास में राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना का स्वर प्रमुख है।
- तुलसीदास में नारी को उद्‌बोधिका शक्ति के रूप

चित्रित किया गया है।

- तुलसीदास को कवि ने भारतीय संसकृति के पुनरुत्थान का प्रतीक माना है।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि निराला कृत 'तुलसीदास' में सांस्कृतिक चेतना प्रखर है। 'तुलसीदास' में निराला ने एक ओर मध्यकालीन भारतीय संस्कृति का पतन और उसके उद्धार के लिए तुलसीदास को बेचैन होना दिखाया है तो दूसरी ओर उनके इस वर्णन में उनके युग के परतंत्र भारत का पतन प्रतिबिंबित हुआ है।

जिस प्रकार तुलसीदास अपने समय में पतनोन्मुख भारतीय संस्कृति के उद्धार के लिए छटपटा रहे थे, उसी प्रकार कविवर निराला भी देश की स्वाधीनता के लिए व्याकुल हो रहे थे। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि निराला कृत 'तुलसीदास' में सांस्कृतिक चेतना प्रमुख रूप से अभिव्यक्त हुई है। इसमें कवि की सांस्कृतिक चेतना कहीं राष्ट्रीयता का रूप धारण करती है तो कहीं दमन और शोषण के विरुद्ध प्रतिवाद करती है और कहीं व्यापक मूल्य की स्थापना करती है। ❑

संदर्भ ग्रंथ-सूची :

1. सिंह, डॉ. विजयपाल-छायावाद के प्रतिनिधि कवि पृ.1
2. निराला-अनामिका पृ.51
3. प्रसाद, जयशंकर - कामायनी पृ.24
4. निराला-तुलसीदास पृ.9
5. निराला - तुलसीदास पृ.20
6. निराला - तुलसीदास पृ.37
7. शर्मा, डॉ. रामविलास - निराला पृ.102
8. निराला - तुलसीदास पृ.40
9. निराला - तुलसीदास पृ.20
10. त्रिपाठी,बाबुराम - निराला काव्य : पुनर्मूल्यांकन पृ.10
11. निराला - तुलसीदास पृ.37
12. शर्मा, डॉ. रामविलास - निराला पृ.106
13. निराला - तुलसीदास पृ.9
14. निराला -तुलसीदास पृ.14

प्राथमिक स्त्रोत :

1. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला-तुलसीदास, राजकमल प्रकाशन : 2009

द्वितीय स्त्रोत :

1. अग्रवाल, डॉ. वासुदेव शरण - कला और संस्कृति, साहित्य भवन, संस्करण-1958
2. अवस्थी, डॉ. विश्वम्भर दयाल - छायावादोत्तर हिंदी प्रबंध-काव्यों का सांस्कृतिक अनुशीलन, सरस्वती प्रकाशन मंदिर, सं : 1970
3. गोयल, डॉ. संतोष-निराला का काव्य प्र. लक्ष्मीनारायण अग्रवाल सं : 1972
4. डॉ. नगेन्द्र - हिंदी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, सं : 1988
5. बाजपेयी, डॉ. नन्द दुलारे-हिंदी साहित्य : बीसवीं शताब्दी, लोक भारती प्रकाशन, सं: 1963
6. बाजपेयी, डॉ. नन्द दुलारे-कवि निराला, वाणी वितान प्रकाशन, सं : 1965
7. सिंह, डॉ. बच्चन - क्रांतिकारी कवि निराला, एन, के. सिंह एंड संस, सं : 1965
8. सिंह, डॉ. प्रमोद - छायावादी कवियों का सांस्कृतिक दृष्टिकोण, लोकभारती प्रकाशन सं : 1973

ISSN 2279-0683

প্রকাশ

মার্চ, ২০২৫

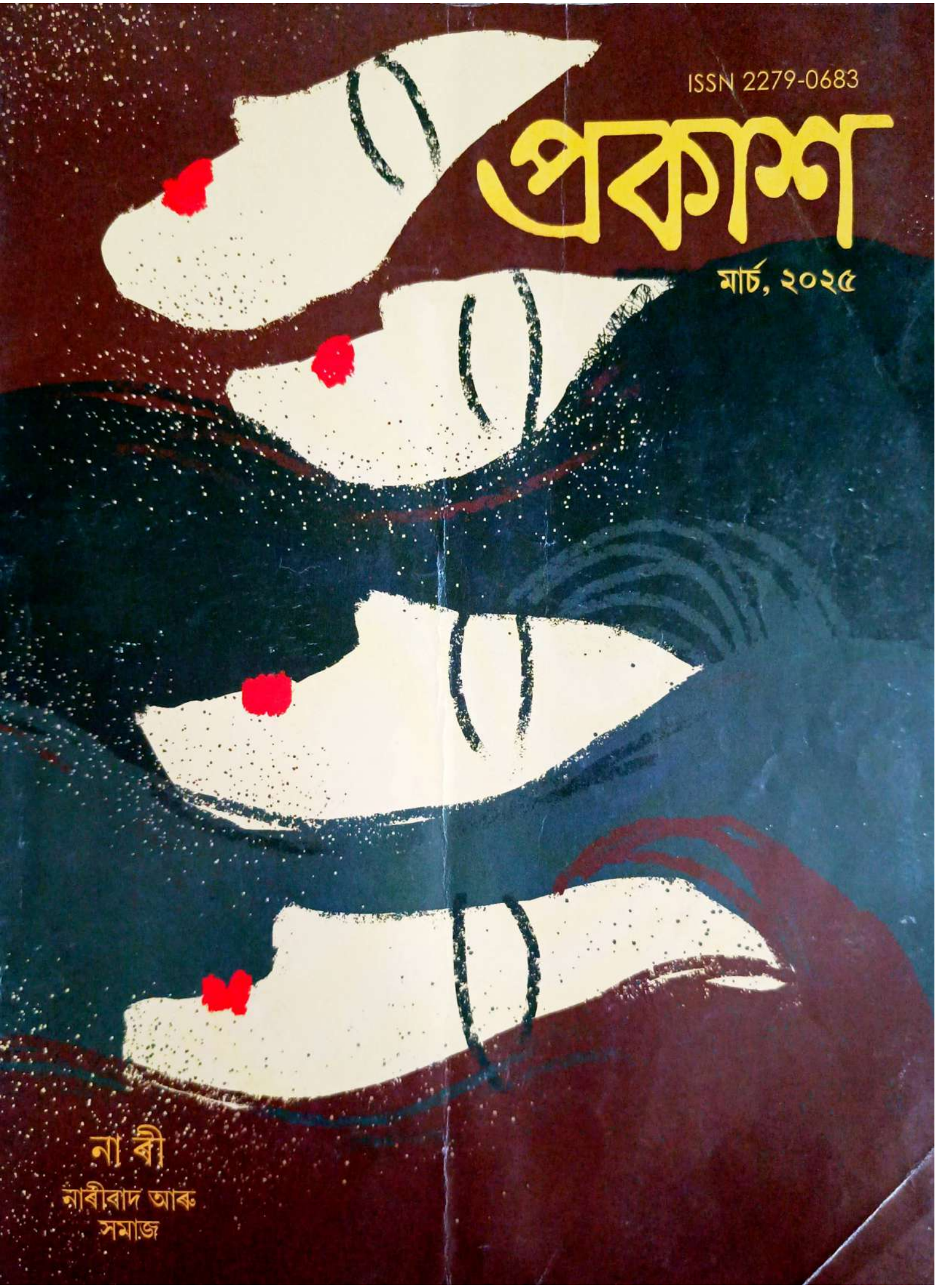

নাৰী

নাৰীবাদ আৰু সমাজ

প্ৰকাশ

তৃতীয় পৰ্ব ।।
১৫৪সংখ্যক প্ৰকাশন ।।
ফাগুন-চ'ত ১৯৪৬ শক।।
মাৰ্চ, ২০২৫

পঞ্জীয়ন নং ঃ ২৯৯৮২/৭৫
ISSN 2279-0683

বিষয় সূচী

সম্পাদকীয়।।৩ ।।



বিষয় ঃ নাৰী

নাৰী, নাৰীবাদ আৰু সমাজ সংস্কৃতিৰ বাগ্‌ধাৰা
ড° গৰিমা কলিতা।। ৪।।
মধ্যপ্ৰাচ্যৰ মহিলা কবি ঃ এটি টোকা আৰু কিছু অনুবাদ
ড° অৰিন্দম শৰ্মা।। ৮।।
মহাশ্বেতা দেৱীৰ গল্পৰ প্ৰান্তীয় নাৰী
ড° অনন্যা হিলৈদাৰী।। ১৩।।
মহাকাব্যিক নাৰী সীতাৰ অৱস্থিতিগত জটিলতা ঃ শংকৰদেৱ আৰু নিৰ্বাচিত ৰচনাৰ আধাৰত এটি পৰ্যালোচনা
ড° মানস প্ৰতীম বৰা।। ১৭।।
'জীৱনৰ জোৱাৰ-ভাটাৰ মাজেদি' আৰু 'মন গংগাৰ তীৰত'ৰ দুই নতুন নাৰী
ড° গীতালী শইকীয়া।। ২৩।।
ইছমাট চুগ্‌টাইৰ সাহিত্যত ব্যক্তি আৰু সমাজ
ড° সত্যজিৎ ভূঞা।। ৩০।।

আত্মজীৱনী

সপোন আৰু সংগ্ৰামৰ কৈশোৰ
য়েছে দৰজে ঠংচি।। ৭৪।।

পৌৰাণিক ৰহস্য কল্প

মাৰীচ
ভাস্কৰ ঠাকুৰীয়া।। ৭৯।।

সম্পাদক ▶ মিহিৰ দেউৰী
সহযোগী সম্পাদক ▶ গীতালি বৰা
সহকাৰী সম্পাদক ▶ অৰ্চনা শইকীয়া

প্ৰকাশক ▶ প্ৰমোদ কলিতা,
সচিব, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ
গুৱাহাটী-৭৮১০২১
মুদ্ৰণ ▶ অৰোৰা ফাইন আৰ্টছ, বামুণীমৈদাম,
গুৱাহাটী-২১
বেটুপাত ▶ সঞ্জীৱ বৰা
মূল্য ▶ ৬০.০০ টকা মাত্ৰ

Publisher :
Pramod Kalita,
Secretary, Publication Board Assam,
Bamunimaidam, Guwahati-21



প্ৰকাশ

তৃতীয় পর্ব ।।
১৫৪সংখ্যক প্রকাশন ।।
ফাগুন-চ'ত ১৯৪৬ শক।।
মার্চ, ২০২৫

পঞ্জীয়ন নং ঃ ২৯৯৮২/৭৫
ISSN 2279-0683

বিষয় সূচী

সম্পাদকীয়।। ৩ ।।

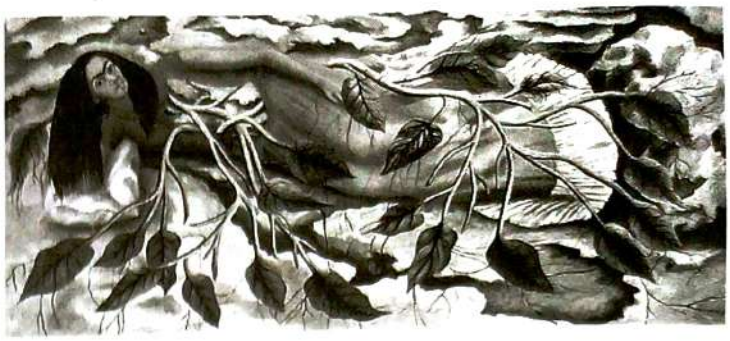

বিষয় ঃ নাৰী

নাৰী, নাৰীবাদ আৰু সমাজ সংস্কৃতিৰ বাগ্‌ধাৰা
ড° গৰিমা কলিতা।। ৪।।
মধ্যপ্রাচ্যৰ মহিলা কবি ঃ এটি টোকা আৰু কিছু অনুবাদ
ড° অৰিন্দম শর্মা।। ৮।।
মহাশ্বেতা দেৱীৰ গল্পৰ প্রান্তীয় নাৰী
ড° অনন্যা হিলৈদাৰী।। ১৩।।
মহাকাব্যিক নাৰী সীতাৰ অৱস্থিতিগত জটিলতা ঃ শংকৰদেৱ আৰু নির্বাচিত ৰচনাৰ আধাৰত এটি পর্যালোচনা
ড° মানস প্রতীম বৰা।। ১৭।।
'জীৱনৰ জোৱাৰ-ভাটাৰ মাজেদি' আৰু 'মন গংগাৰ তীৰত'ৰ দুই নতুন নাৰী
ড° গীতালী শইকীয়া।। ২৩।।
ইছমাট চুগ্‌টাইৰ সাহিত্যত ব্যক্তি আৰু সমাজ
ড° সত্যজিৎ ভূঞা।। ৩০।।

আত্মজীৱনী

সপোন আৰু সংগ্রামৰ কৈশোৰ
য়েছে দৰজে ঠংচি।। ৭৪।।

পৌৰাণিক ৰহস্য কল্প

মাৰীচ
ভাস্কৰ ঠাকুৰীয়া।। ৭৯।।

সম্পাদক ▶ মিহিৰ দেউৰী
সহযোগী সম্পাদক ▶ গীতালি বৰা
সহকাৰী সম্পাদক ▶ অর্চনা শইকীয়া

প্রকাশক ▶ প্রমোদ কলিতা,
সচিব, অসম প্রকাশন পৰিষদ
গুৱাহাটী-৭৮১০২১
মুদ্রণ ▶ অৰোৰা ফাইন আর্টছ, বামুণীমৈদাম,
গুৱাহাটী-২১
বেটুপাত ▶ সঞ্জীৱ বৰা
মূল্য ▶ ৬০.০০ টকা মাত্র

Publisher :
Pramod Kalita,
Secretary, Publication Board Assam,
Bamunimaidam, Guwahati-21



প্রবন্ধ

ড° বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্যৰ সম্পাদকীয়
আৰু সৃষ্টিশীল লেখাৰ আঁৰৰ সমাজ চিন্তা
ড° মদন শৰ্মা।। ৫১।।
পাঠকীয় অনুভৱৰ স্বৰলিপি ঃ বৰ্হেছৰ
কীহতে আৰু লেখকৰ অস্তিত্ব
ভাস্কৰ জ্যোতি নাথ।। ৫৭।।
আধুনিকতাবাদী কবি জ্ঞান পূজাৰীৰ
কবিতাৰ ভাষা-শৈলী নিৰ্মাণ
ড° অৰ্পণা কোঁৱৰ।। ৬০।।
ৰামধেনু যুগৰ কবি সুশীল শৰ্মাৰ কবিতাৰ
বিষয় বৈচিত্র্যৰ বিশ্লেষণ
ড° মালবিকা শৰ্মা।। ১০১।।

বিষয় ঃ নাৰী
এমুঠি কবিতা



৩৪-৪১
সৌৰভ শইকীয়া
প্ৰতীম বৰুৱা
মৃদুল হালৈ
দিগন্ত শইকীয়া
অজিৎ গগৈ
সমীৰ শংকৰ দত্ত

কবিতা



৭০-৭৩
নীলিমা ঠাকুৰীয়া হক
অৰ্চনা পূজাৰী
জ্যোতিৰ্ময় চক্রৱৰ্তী
দ্বিজেন কুমাৰ দাস
ৰতন সাউদ
পূৰবী চুতীয়া



গল্প

অমৰাৱতী
গীতালি বৰা।। ৪২।।
ফলক
অনামিকা বৰা।। ৪৮।।

গ্রন্থ আলোচনা

'একবিংশ শতিকাৰ অসম' ঃ গুৱাহাটী
মহাবিদ্যালয়ৰ হীৰক অর্ঘ্য
দেৱজিৎ নাথ।। ৯৫।।
ৰূপ-বর্ণ-ৰেখা
ড° মৃদুস্মিতা ফুকন।। ৯৮।।

অনুবাদ গল্প

ভোলাৰামৰ জীৱ
ৰাজেন্দ্রনাথ বৰদলৈ।। ৮৬।।
কাহিনীটো হৃৎপিণ্ডই কৈছে
প্রীতি বৰা।। ৮৯।।

ফটো ইণ্টাৰনেটৰ পৰা সংগৃহীত

পৰিবেশক ▶ প্রণৱজ্যোতি চহৰীয়া
ফোন-৯৮৬৪৪-০১২৪৭

ঘোষণা

*প্রকাশ*লৈ সকলো ধৰণৰ লেখা পঠিওৱাৰ ঠিকনা ঃ

***সম্পাদক/ ফোন-৯৩৬৫০৩৪৫৬৫, প্রকাশ,* অসম**
প্রকাশন পৰিষদ, বামুণীমৈদাম, গুৱাহাটী-২১
email : prakash.editor21@gmail.com

অ-মনোনীত লেখা ওভতাই দিয়া নহয়। নিজৰ লগত প্রতিলিপি ৰাখিহে *প্রকাশ*লৈ লেখা পঠিয়াব।

প্রত্যেক লেখককে লেখাৰ লগত তেওঁৰ সম্পূর্ণ ডাক-ঠিকনা আৰু বেংকৰ একাউণ্ট নম্বৰ, আই এফ এছ চি কোড নম্বৰ আৰু ব্রাঞ্চৰ নাম উল্লেখ কৰিবলৈ অনুৰোধ জনোৱা হ'ল।

ৰামধেনু যুগৰ কবি সুশীল শর্মাৰ কবিতাৰ বিষয় বৈচিত্র্যৰ বিশ্লেষণ

ড° মালবিকা শর্মা

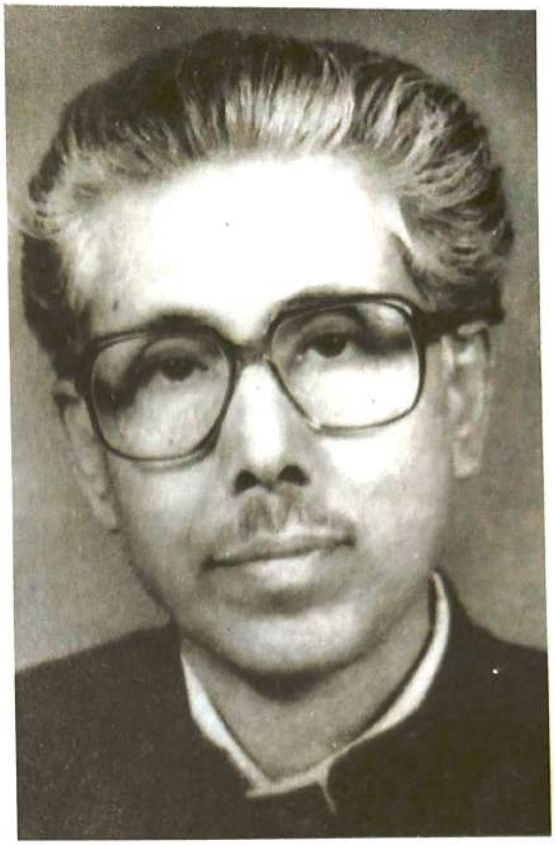

ৰামধেনু যুগৰ কবি সুশীল শর্মা (১৯৩৫-২০১৭)ও ইয়াৰ ব্যতিক্রম নহয়। ৰামধেনু যুগত কবি সুশীল শর্মাৰ এক সুকীয়া স্থান আছে। তেওঁৰ কবিতা *ৰামধেনু* আলোচনীত নিয়মীয়াকৈ প্রকাশ হৈছিল। তেওঁ অসমীয়া কবিতাক নতুন ৰূপত সজাই পৰাই তুলি, পাঠকৰ মনত নতুন আশাৰ সঞ্চাৰ কৰিব পাৰিছিল। তেওঁৰ কবিতাই ভাব আৰু ভাষাৰ সু সমন্বয়ত এক অপূর্ব কমনীয়তা লাভ কৰিছিল...

পঞ্চাছৰ দশকত *ৰামধেনু* আলোচনীৰ প্রকাশৰ লগে লগে অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাসত এটা নতুন যুগৰ সূচনা হয়। এই যুগতেই আধুনিক অসমীয়া কবিতাই এক সুকীয়া পৰিচয় লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হয়। *ৰামধেনু* আলোচনীয়ে অসমীয়া সাহিত্যক আৰু অধিক সমৃদ্ধ কৰি তোলে। এই *ৰামধেনুৰ* বুকুতে কাব্য সৃষ্টিত ব্রতী হোৱা এচাম প্রতিভাশালী কবিয়ে কাব্য-চর্চাৰ যোগেদি নতুন চিন্তা-চেতনা প্রকাশেৰে আধুনিক অসমীয়া কবিতাৰ বিস্তাৰ ঘটাইছিল।

'ৰামধেনু' যুগৰ প্রায়সকল-কবিয়ে আধুনিক কবিতাৰ আদর্শৰ ভেটিত বিষয়বস্তুৰ নির্বাচন, সুনির্বাচিত শব্দচয়ন, বাক্যবিন্যাস, প্রতীকৰ ব্যৱহাৰ, চিত্রকল্পৰ প্রয়োগ আদিৰ দিশত বিশেষ সতর্কতা অৱলম্বন কৰিছিল আৰু আংগিক পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাৰে আধুনিক অসমীয়া কবিতাৰ নির্মাণৰ প্রস্তুতিত মূল্যৱান অৰিহণা যোগাইছিল। ৰামধেনু যুগৰ কবিসকলে যুদ্ধোত্তৰ যুগৰ আধুনিক জীৱনৰ বিচিত্র অভিজ্ঞতাক কবিতাত ৰূপায়িত কৰাৰ চেষ্টা কৰিছিল। দেশৰ স্বাধীনতাই কঢ়িয়াই অনা আর্থসামাজিক আৰু সাংস্কৃতিক জীৱন কবিয়ে কবিতাৰ মাধ্যমেৰে প্রকাশ কৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছিল। সেয়ে ৰামধেনু যুগৰ কবিসকলৰ কবিতাত সততে প্রতিফলিত হৈছিল পৰিৱর্তিত সমাজৰ ছবিখন। ৰামধেনু যুগৰ কবিসকলৰ অৱদান সম্পর্কে বিশিষ্ট বুদ্ধিজীৱী হোমেন বৰগোহাঞিয়ে

এনেদৰে কৈছে— *ৰামধেনুৰ* কবিসকলে অসমীয়া কবিতাৰ যি নতুন ৰূপ নির্মাণ কৰিলে, পাঠকৰ মনত কবিতাৰ পৰা যি নতুন প্রত্যাশাৰ সৃষ্টি কৰিলে, সিয়েই পাছলৈ অসমীয়া কবিতাৰ চিৰস্থায়ী ধাৰাত পৰিণত হ'ল। যোৱা অর্ধশতিকাত অসমীয়া কবিতাৰ যি সৌধ নির্মিত হৈছে তাৰ ভেটিটো বান্ধিছিল *ৰামধেনুৰ* কবিসকলে। সিয়েই হ'ল অসমীয়া সাহিত্যত *ৰামধেনুৰ* যুগমীয়া অৱদান। (পাতনি ঃ *ৰামধেনু*, একাদশ আৰু দ্বাদশ বছৰ)

ৰামধেনু যুগৰ কবিসকলে আধুনিক মনৰ বিচিত্র উপলব্ধি প্রকাশ কৰাৰ বাবে জীৱনৰ গভীৰতালৈ প্রৱেশ কৰিছিল আৰু অৱচেতন মনৰ কথাবোৰ যুকিয়াই শব্দৰ ৰূপ দিছিল। সেয়ে মার্ক্সীয় আৰু ফ্রয়েদীয় মনস্তত্ত্বৰো আভাস জিলিকি উঠিছিল এই যুগৰ কবিতাত।

ৰামধেনু যুগৰ কবি সুশীল শর্মা (১৯৩৫-২০১৭)ও ইয়াৰ ব্যতিক্রম নহয়। ৰামধেনু যুগত কবি সুশীল শর্মাৰ এক সুকীয়া স্থান আছে। তেওঁৰ কবিতা *ৰামধেনু* আলোচনীত নিয়মীয়াকৈ প্রকাশ হৈছিল। তেওঁ অসমীয়া কবিতাক নতুন ৰূপত সজাই-পৰাই তুলি, পাঠকৰ মনত নতুন আশাৰ সঞ্চাৰ কৰিব পাৰিছিল। তেওঁৰ কবিতাই ভাব আৰু ভাষাৰ সু-সমন্বয়ত এক অপূর্ব কমনীয়তা লাভ কৰিছিল। যিকোনো বিষয়কে কবিয়ে ইমান সহজ অথচ গতিশীলতাৰে প্রকাশ কৰিছিল যে পাঠকেও অতি সহজতে কবিতাৰ অন্তর্ভাগত সোমাবলৈ সুবিধা পায়। কবি সুশীল শর্মা সম্পর্কে বিশিষ্ট সমালোচক অধ্যাপক ড° নগেন শইকীয়াই কবিৰ একমাত্র সংকলন *জোনাক ৰাতিৰ আৰতিৰ* প্রাক্কথনত এনেদৰে কৈছে— কোনো সন্দেহ নাই যে সুশীল শর্মা আধুনিক কবি যুদ্ধোত্তৰ যুগৰ আধুনিক কবি। কিন্তু আধুনিক হৈয়ো গ্রামীণ জীৱনৰ মাজতে যেন মনেৰে থিয় হৈ আছে। কেৱল এটা কবিতাতে নহয় তেওঁৰ প্রায়বোৰ কবিতাতে মই প্রকৃতি আৰু মানুহৰ কোমল স্পর্শ অনুভৱ কৰোঁ। অথচ তেওঁ সঁচাকৈয়ে এজন আধুনিক কবি। ইয়াত কোনো সন্দেহ নাই। এক স্মৃতিকাতৰ ৰোমাণ্টিক চেতনাৰো স্পর্শ তেওঁৰ কবিতাত আছে।

(প্রাক্কথন; *জোনাক ৰাতিৰ আৰতি*, দ্বিতীয় প্রকাশ, ২০১৮)

কবি সুশীল শর্মাৰ কবিতাত প্রগতিবাদী ভাৱধাৰাৰ ক'ৰবাত স্পষ্ট ৰূপত, আন ক'ৰবাত অর্থব্যঞ্জক ৰূপত দেখিবলৈ পোৱা যায়। কবি সুশীল শর্মাই আত্মপ্রকাশ কৰিছিল এজন চিত্রকল্পবাদী কবি হিচাপে। 'ৰামধেনু'ৰ সময়ছোৱা আছিল অসমৰ বাবে এক সন্ধিক্ষণৰ সময়। দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধৰ পাছত দেশে স্বাধীনতা লাভ কৰিলে। সেই সময়ৰ পৰা ৰাজনৈতিক, সামাজিক, অর্থনৈতিক আদি সকলো ক্ষেত্রতে পৰিৱর্তনৰ চিন প্রকট হৈ উঠিল। কবি-সাহিত্যিকসকলৰ মনতো সেই পৰিৱর্তনে ক্রিয়া কৰিলে। কিয়নো কবি সমাজৰ প্রতি দায়বদ্ধ। কবি সুশীল শর্মাৰ কৈশোৰ পাৰ হৈছিল গাঁৱত। সেয়ে গাঁও-নগৰৰ পার্থক্যখিনি কবিতাৰ মাজেৰে তেওঁ প্রকাশ কৰিবলৈ যত্ন কৰিছিল। 'বসন্ত' শীর্ষক কবিতাত প্রথম স্তৱকত গাঁৱৰ বসন্তৰ দৃশ্য আঁকাৰ পাছত নগৰৰ দৃশ্য তেওঁ এইদৰেই আঁকিছে—

'ইয়াত নামিছে সন্ধ্যা; সমগ্র বন্দৰ জুৰি পাল আৰু মাস্তুলৰ ভিৰ

মটৰ ৰিক্সাৰ গতি, লেবাৰৰ ঠেলা-ঠেলি, ফুটপাথ ধূলিৰ আবিৰ

ৰেস্তোৰাঁৰ ব্যস্ত সুৰ, ব্যস্ত আড্ডা

কলৰ চিম্ফনী গর্জে, চিনাকি আবেলি জুৰি

অচিনাকি মানুহৰ মেলা— ' (বসন্ত; *জোনাক ৰাতিৰ আঁৰত*, - ২৪)

সত্তৰ দশকৰ কবিতাত কবিৰ অভিব্যক্তিৰ পৰিৱর্তন দেখিবলৈ পোৱা যায়। বাস্তৱ জীৱন অধিক স্পষ্টভাৱে তেতিয়াৰ পৰা তেওঁৰ কবিতাত প্রতিফলিত হ'বলৈ ধৰে—

দিনবোৰ আজি

হয়তো ক্রমাৎ

কঠিনৰ পৰা কঠিনতৰ হৈ আহিল।

জীৱনে সলালে অর্থ

বতাহে সলালে তাৰ গতি (দিনবোৰ কঠিন দিনবোৰ, *জোনাক ৰাতিৰ আঁৰতি*, ৫০)

'স্বাধীনতাৰ ৰূপালী জয়ন্তীৰ বছৰটোৰ এফাঁকি নিষ্ঠুৰ গদ্য' শীর্ষক কবিতাটিত ভোকাতুৰ ৰাইজৰ মর্মবেদনাৰ ছবি কবিয়ে উপস্থাপন কৰিছে। এগৰাকী তিৰোতাই ল'ৰা-ছোৱালীকেইটা ভোকত কল্‌মলাই থকা দেখি একোকে আগ বঢ়াব নোৱাৰি নিজে আত্মহত্যা কৰিছিল। তেওঁ যেন খবৰটো পাই নিজকে প্রশ্ন কৰিছিল—

'মই ভাবিবৰ বাধ্য হৈছোঁ

এটা জাতিৰ পিতৃপুৰুষৰ এজন হিচাপে

মোৰ চুবুৰিত ঘটা এই অপমৃত্যুৰ অপৰাধত

মোৰ কিবা প্রায়শ্চিত্তৰ

বিধান থকাটো উচিত আছিল নেকি?'

(স্বাধীনতাৰ ৰূপালী জয়ন্তীৰ বছৰটোৰ এফাঁকি নিষ্ঠুৰ গদ্য; *জোনাক ৰাতিৰ আৰতি*, ৫৬)

পৰিৱর্তন সমাজখনৰ কথা কবিৰ আন এটি কবিতাত প্রকাশ এনেদৰে হৈছে—

'কাৰ স'তে কথা ক'বা তুমি

এতিয়া ইয়াত সকলো মৃত

সিহঁতে তোমাৰ শেৱালি জুপি মাৰিলে

বকুল জুপিও;

তোমাৰ চোতালৰ গোলাপ জুপিৰ ঠাইত

সিহঁতে এটি দোকান ঘৰ সাজিলে। (এগৰাকী মৃত কবিৰ স'তে; *জোনাক ৰাতিৰ আৰতি* ৫৭)

যুদ্ধই যুগে যুগে কঢ়িয়াই আনিছে ধ্বংস। ৰাজনীতিকে ক্ষমতাৰ লোভত, পৰৰাজ্যৰ লোভত যুদ্ধক স্বাগতম জনায়। কিন্তু সাধাৰণ সৈনিকৰ জীৱনলৈ নামি আহে আন্ধাৰ। শাসক গোষ্ঠীৰ তাড়নাত যুদ্ধলৈ বিদায় দিছে প্রিয়তম পুৰুষক কোনো এখন গাঁৱৰ অখ্যাত নাৰীয়ে। কিন্তু প্রিয়তমক যুদ্ধলৈ পঠিয়াই নাৰী হৃদয়ত অনুভৱ কৰিছে অবিৰত শোক। সেই শোকানুভূতি

সুশীল শর্মাই প্রকাশ কৰিছে অতি প্রাঞ্জলভাৱে ঃ

মোৰ মানহজন যুদ্ধলৈ গ'ল।
এয়াতো এনে নহয় যে
তেওঁ কেইদিনমানৰ ভিতৰতে
কেইমাহ মানৰ ভিতৰতে ঘূৰি আহিব।
হায়! যুদ্ধৰ জানো ক'ৰবাত শেষ আছে?
অন্ত আছে? (মোৰ ভাল লগা এটি কবিতা; চীনা কবিতা; *জোনাক ৰাতিৰ আৰতি*, ৪৫)

কবি শর্মাৰ আন এটি প্রাণস্পর্শী কবিতা 'বয়স'। পঞ্চাছৰ দশকত সহজ-সৰল অর্থৱহ প্রতীকক স্পষ্ট আৰু সজীৱভাৱে মূর্ত কৰি কবিতাক প্রাণৱন্ত কৰি তোলাৰ কৃতিত্ব এইগৰাকী কবিয়ে দাবী কৰিব পাৰে। বয়স সকলোৰে বাঢ়ে মনৰ, মগজুৰ, পৃথিৱীৰ, আনকি ঈশ্বৰৰো। বুঢ়ী আইতাৰ বয়সে একুৰি-দুকুৰিকৈ পাঁচকুৰি পূৰ কৰিলে। জোন, জোনাক আৰু আকাশৰো বয়স বাঢ়িছে। এনেদৰে কবিতাটিত স্বভাৱসিদ্ধ ধাৰণাক উপস্থাপন কৰি তাক লাহে লাহে সীমাবদ্ধ আধুনিকতাৰ মাজলৈ আগ বঢ়াই নিয়াৰ চেষ্টা কৰিছে। বিশালতা যেন কেন্দ্রীভূত হৈছে জীৱনৰ সীমাবদ্ধতাত ঃ

'এওঁৰো বয়স হ'ল
দুটা ব্লাউজপিচ হ'ল ইবেলিতে নতা।
তাৰ লগে লগে ঃ
আৰু
দীঘল দুখন ভৰি
বাকচত চুটি চুটি অনেক পেণ্টেৰে
মোৰতো বয়স হ'ল
বহুত বয়স (বয়স; *জোনাক ৰাতিৰ আৰতি*, ২৬)

কবিগৰাকীৰ আন এটি উল্লেখযোগ্য কবিতা 'আমাৰ গাঁও'। সহজ-সৰল ভাষাৰে, নিভাঁজ অনুভূতিৰে যে একোখন সুন্দৰ কাব্যিক চিত্র আঁকিব পাৰি তাৰ সুন্দৰ উদাহৰণ এই কবিতাটি। গাঁও আৰু চহৰৰ মাজত থকা পার্থক্যৰ এডাল সৰু আকৃতিৰ সৰলৰেখা কবিতাটিৰ শেষত টনা হৈছে। অনুভূতি, আন্তৰিকতা, সজীৱতা আৰু মাটিৰ গোন্ধ অনুভৱ কৰিলেহে এনে ধৰণৰ কবিতাৰ সৃষ্টি কৰিব পাৰি।

'এয়া মাহীৰ ঘৰ, সি কাষত মমতৰ, দূৰণিত পেহা আৰু দদাইৰ পাম
ককাৰ হোকাৰ মাতে আমাৰ চোতাল সেয়া, মাথোন এখন তামোলৰ কাম
ইকাষে তুলসী জুপি, সিকাষে ভঁৰাল ঘৰ, পেহী আৰু আইতাৰ সাধু
বিচনীৰ বাৱ পাই টোপনিয়ে জোকালেহি ভাইটি ভন্টি সেয়া বুধৰাম যাদু।।
(আমাৰ গাঁও,জোনাক ৰাতিৰ আৰতি,২২)

এই কবিতাটিৰ সম্পর্কত অধ্যাপক ৰজনী কান্ত দাসে তাৎপর্যপূর্ণ মন্তব্য আগ বঢ়ায়। 'আমাৰ গাঁও' কবিৰ আন এটা নিটোল কবিতা। নগৰৰ যান্ত্রিকতা আৰু কৃত্রিমতাৰ পৰশ নপৰা গাঁও এখনৰ নিভাঁজ প্রতিচ্ছবি বান্ধ খাই আছে কবিতাৰ ফ্রেমত। কবিৰ সাৱলীল বর্ণনাত সজীৱ হৈ উঠিছে চিনাকি গাঁওখনৰ মনোৰম প্রাকৃতিক পৰিৱেশ। কবিতাটোৰ প্রথম স্তৱকটোতে মুকুলি হৈছে কবিৰ সিদ্ধ হাতৰ অংকন ঃ (৩৮, ভিৰৰ মাজত অকলশৰীয়া, ২০১১)।

এয়েই চিনাকি বাট, চিনাকি গাঁৱৰ বাট,
গছে-বনে আবেলিৰ ভিৰ
বাঁহবাৰী শাৰী-শাৰী, আঁহত বটৰ লানি,
অত-তত চিলনীৰ নীড়; (আমাৰ গাঁও, *জোনাক ৰাতিৰ আৰতি*, ২২)

কবিৰ আন এটি সার্থক কবিতা হ'ল— 'জোনাক ৰাতিৰ আৰতি'। কোনো কোনো সমালোচকে এই কবিতাটি তেওঁৰ শ্রেষ্ঠ কাব্য কৃতি বুলি অভিহিত কৰিছে। কবিতাটি প্রকাশ পাইছিল *ৰামধেনু*ৰ নৱম বছৰৰ দ্বিতীয় সংখ্যাত। এই কবিতাটিত কবিয়ে সুন্দৰ চিত্রকল্পৰ প্রয়োগ কৰি ৰোমাণ্টিক আনন্দৰ সুৰ ঢালি দিয়াত সফল হৈছে।

'জোনটো সিপাৰৰ বালিচৰত
গা ধুই আছিল
আমাৰ চকুৰে-চকুৰে পৰিল;
তাই বৰ লাজ পালে আৰু
কহুৱা ডৰাৰ মাজত লুকাই পৰিল। (জোনাক ৰাতিৰ আৰতি, ১৩)

এনেদৰে কবি সুশীল শর্মাই 'ৰামধেনুৰ পাতত কবিতাৰ মহাকাব্যিক আধাৰভূমি সাজি নিজৰ স্থান দৃঢ় কৰিছিল। *ৰামধেনু*ৰ বিষয় আৰু আংগিকৰ বৃত্তৰ মাজত ঘূৰিও তাৰ মাজত নিজা চিন্তা, ৰুচি-অভিৰুচি, ধ্যান-ধাৰণা, চিন্তা-দর্শনৰ এখন সৰু আধাৰ ভূমি এইগৰাকী কবিয়ে সৃষ্টি কৰিছিল। কবিয়ে নিজেই কৈছে যে তেওঁৰ কাব্যসৃষ্টিৰ প্রেৰণা নিঃসন্দেহে মানুহ, প্রকৃতি আৰু বিশ্ব প্রকৃতি। ⏭

ফোন ঃ ৯৪৩৫৫-৫১০৭৩

গ্রন্থসূচী ঃ

১। তালুকদাৰ, ড° লিপিকা (সম্পা) - *ভিৰৰ মাজত অকলশৰীয়া*, আখৰ প্রকাশন সংস্কৰণ ঃ ২০১১।

২। বৰুৱা, ড° প্রহ্লাদ - *অসমীয়া চুটিগল্পৰ অধ্যয়ন*, বনলতা, সংস্কৰণ ঃ ২০১১।

৩। শর্মা, সুশীল - *জোনাক ৰাতিৰ আৰতি*, শতাব্দী প্রকাশ, দ্বিতীয় সংস্কৰণ, ২০১৮।

